पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज

पूज्यपाद गुरुदेव का जन्म लगते असौज तीज सन् 1942 में ग्राम खुर्रमपुर-सलेमाबाद, जनपद गाजियाबाद (पहले मेरठ) उत्तर प्रदेश में हुआ। इनके पिताजी का नाम श्री नानक चन्द और माता जी का नाम श्रीमती सोना देवी था। लगभग दो मास की अवस्था में श्वासन में लेटने से ही कुछ समय के उपरान्त शिशु की गर्दन दोनों ओर हिलने लगी और होठ फड़फड़ाने लगे। इस क्रिया की पुनरावृत्ति होने पर अज्ञानतावश उपचार प्रारम्भ हो गया। परन्तु उस विशेष अवस्था में जाने की घटनाएँ बढ़ती रहीं और आयु बढ़ने के साथ-साथ मन्त्र-पाठ और प्रवचन स्पष्ट सुनाई देने लगा। छः वर्ष की आयु में इन्हें भयानक चेचक निकली तो इनके मुख-मण्डल पर अपनी स्मृति छोड़ गई।

सात वर्ष की अल्यायु में ही इनके पिताश्री ने अपने गाँव में ही पशुओं व कृषि के कार्य के लिए नौकर रख दिया। धीरे-धीरे इनके प्रवचनों की क्रिया को मनोरंजन व कौतुक का साधन बनाए जाने लगा। एक दिवस प्रवचन की प्रक्रिया के पश्चात् अत्याधिक पिटाई के कारण लगभग 15 वर्ष की अवस्था में भीषण परिस्थितियों में मध्य राशि में गृह को त्यागकर विचरण करते हुए अपनी कर्मभूमि बरनावा जा पहुँचे वहाँ पर आप योग मुद्रा में समाधिस्थ होकर प्रवचन करने लगे, जिसकी सुगन्धी आस-पास में तीव्रता से फैल गई। आपने अपने प्रवचनों के माध्यम से वेद ब्रह्म पारायण यज्ञों का आयोजन करना शुरु कर दिया। जन-समूह के अथाह प्रेम व सहयोग से बरनावा लाक्षागृह पर पाँच यज्ञशालाएँ, महानन्द संस्कृत महाविद्यालय, आश्रम व गऊशाला की स्थापना की, जिसका प्रबन्ध उनके द्वारा स्थापित श्री गाँधी धाम समिति की देखरेख में होता है।

पूज्यपाद गुरुदेव 28 दिसम्बर 1961 में पहली बार दिल्ली प्रवचन के लिए आए। अथाह ज्ञान के भण्डार, आध्यात्मिक जगत की महान् व अद्‌भुत विभूति के प्रवचन सुनने के पश्चात् प्रवचनों को टेप करने का निर्णय लिया गया और कुछ समय के उपरान्त प्रवचनों को टेप करके प्रकाशित करने के लिए पूज्यपाद गुरुदव की संरक्षकता में वैदिक अनुसन्धान समिति का दिल्ली में गठन हो गया। जन्म जन्मान्तरों के शृङ्गी ऋषि की आत्मा ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज इस अज्ञानता के युग में वैदिक संस्कृति का पुनः उत्थान करने के लिए जीवनपर्यन्त लगे रहे। ऋषि-मुनियों ने अनुसन्धान के द्वारा भौतिक व आध्यात्मिक विज्ञान को अपने जीवन में कितना साकार किया है उसकी अथाह चरमसीमा इनके प्रवचनों में स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है। इस अथाह ज्ञान को मानवता के लिए आचरण व व्यवहार में लाने का सरल व श्रेष्ठ मार्ग प्रदर्शित किया है और साहित्य की गुत्थियाँ स्पष्ट की हैं। जिससे मानव अपना व जनसाधारण का कल्याण करते हुए इस भव सागर से पास हो सकता है।

यह दिव्य आत्मा 15 अक्टूबर 1992 को पचास वर्ष की अवस्था में ब्रह्ममूहुर्त के समय अपने लोकों को गमन कर गई। **–वैदिक अनुसन्धान समिति (पञ्जी.)**

॥ ओ३म् ॥

प्रभु से विनय

हे ब्रह्म! मैं तेरी शरण में आया हूँ और जहाँ भी मैं जाता हूँ वहाँ तुझे ही दृष्पिात करता हूँ। प्राची दिक् में, पूर्व में अग्नि का प्रावधान हो रहा है और दक्षिण में इन्द्र बन करके रहते हो और प्रतीची दिक् में वरुण बन करके रहते हो उदीची दिक् में सोम बन करके रहते हो ज्ञान के भण्डार हों, ध्रुवा में पालन करने वाले विष्णु हो और ऊर्ध्वा में पालन करने वाला बृहस्पति कहलाता है। वह प्रभु! की उपासना करता है प्रातः काल कहता है कि प्रभु पाप करने के लिए कहाँ जाऊँ और मेरे द्वारा पाप क्यों हों? हे प्रभु! मुझे इतनी शक्ति प्रदान करो कि मैं पूर्व में अग्नि के तुल्य तेज को दृष्टिपात करता रहूँ, मैं दक्षिण में इन्द्र को दृष्टिपात करता रहूँ। और अन्न का जो भण्डार है जो मानव को वृत्त बनाता है। हे प्रभु! प्रतीची में तुम वरुण बन करके रहते हो और वह वरुण ही मेरे जीवन की सार्थकता है इसी प्रकार उदीची में सोम बन करके रहते हो। सोम किसे कहते हैं? ज्ञान को सोम कहते हैं, विज्ञान को सोम कहते है। विवेक को सोम कहते हैं वह धारण होने वाला सोम हैं योगीजन इसी सोम को पान करते हुए ज्ञान और विवेक से सने हुए अमृत को प्राप्त करते हैं। तो उनकी वाणी में सोमपन आ जाता है। प्रभु! आप ध्रुवा में पालन करने वाले विष्णु बन करके रहते हो, आज हम सबकी पालना करने वाले हों और ऊर्ध्वा में प्रभु! आप बृहस्पति बन करके मेरे जीवन के रक्षक बनते हो, क्योंकि रक्षा विद्या और विवेक से होती है ज्ञानी ही संसार में महान कहलाता हैं और उसका नेतृत्व करने वाला बृहस्पति कहलाता हैं।

पूज्यपाद-गुरुदेव

अंक : 545 कुल पृष्ठ संख्या समग्र अंक : 620
वर्ष : 46 44 समग्र वर्ष : 52

अनुक्रम

क्रम संख्या	विषय	पृष्ठ संख्या
1. प्रभु से विनय	पूज्यपाद-गुरुदेव	3
2. अनुक्रम		4
3. धर्म और मानवता	पूज्यपाद-गुरुदेव	5-20
4. महर्षि लोमश और काग्भुषुण्ड जी	पूज्यपाद-गुरुदेव	21-36
5. सौभाग्यशाली माता	पूज्यपाद-गुरुदेव	37
6. ऋषियों के उद्गार		38
7. दान, पुस्तकों की सूची व पुस्तक प्राप्ति के स्थान तथा सूचना इत्यादि		39-42

चतुर्वेद ब्रह्म पारायण महायाग

परमपिता परमात्मा की असीम अनुकम्पा से एवम् पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज (पूर्व शृङ्गी ऋषि जी) के शुभ आशीर्वाद से प्रति वर्ष की भाँति इस वर्ष भी चतुर्वेद ब्रह्म पारायण महायाग का आयोजन लाक्षागृह बरनावा में श्री महानन्द संस्कृत महाविद्यालय के प्रांगण में दिनाँक 18 फरवरी, 2018 से 25 फरवरी, 2018 तक बड़े हर्ष एवम् उल्लास के साथ आयोजित किया जा रहा है जिसमें आप सब अपने सम्बन्धियों व मित्रों सहित सादर आमन्त्रित हैं।

श्री गाँधी धाम समिति (पञ्जी.)

आप सभी को होली की हार्दिक शुभकामनाएँ।

।। ओ३म् ।।

धर्म और मानवता

जीते रहो!

देखो मुनिवरो! आज हम तुम्हारे समक्ष पूर्व की भाँति कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गुण-गान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से जिन वेद मन्त्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहाँ परम्परागतों से ही उस मनोहर वेद वाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेद वाणी में उस मेरे देव परमपिता परमात्मा की प्रतिभा का वर्णन किया जाता है, क्योंकि वह परमपिता परमात्मा महान् और प्रतिभाशाली कहलाया जाता है। उसी की चेतना से यह जगत् चेतनित हो रहा है। जितना भी यह जड़ जगत् अथवा चैतन्य जगत् है, उनको जो क्रिया में लाने वाला है अथवा क्रियाशील बना रहा है वह एक मनोनीत चेतना कहलाई जाती है। उसी की चेतना में वह सर्वत्र ब्रह्माण्ड क्रियाशील दृष्टिपात आ रहा है।

धर्म का स्वरूप

आज का हमारा वेद का ऋषि हमें यह कह रहा है कि यह नाना प्रकार की प्रेरणा दे रहा है और यह कह रहा है **हे मानव! तू अपने जीवन को ऊर्ध्वागति में ले जाने का प्रयास कर।** ऊर्ध्वागति में कौन जाता है? ऊर्ध्वागति हम किसे कहते हैं? हमारे आचार्यों ने यह माना है कि सर्वत्र इन्द्रियों में उस परमपिता परमात्मा की प्रतिभा का वर्णन अथवा उसकी महानता निहित रहती है। **हमारी प्रत्येक इन्द्रियों में धर्म और मानवता समाहित रहती है।** तो हमें विचारना चाहिए कि मानव का धर्म और मानवता दोनों का कितना घनिष्ठ सम्बन्ध है। क्योंकि धर्म उसे कहा जाता है, जिसे मानव अपने में धारण कर लेता है और धर्म उसे कहते हैं जो धर्म मानव की इन्द्रियों में समाहित रहता हैं। वह धर्म

नहीं किया जाता वह स्वतः ही उसमें निहित रहता है। प्रत्येक इन्द्रियाँ धर्म की उस सूत्र में पिरोई हुई रहती हैं जिस सूत्र को धारण करने के पश्चात् मानव का जीवन धन्य हो जाता है। वह जो धर्म है वह मुनिवरो! 'इन्द्रियां वृहे व्रत लोकाम्' धर्मरूपी सूत्र में यह संसार पिरोया हुआ है। यह नाना लोक-लोकान्तर पिरोये हुए रहते हैं परन्तु आज हमें धर्म को जानना है। मैंने धर्म के सम्बन्ध में बहुत-सी विवेचना पुरातनकाल में प्रकट करते हुए कहा है कि मानव को वास्तव में धर्म को जानना चाहिए। क्योंकि धर्म एक सूत्र है जिस सूत्र में प्रत्येक परमाणु पिरोया हुआ है। लोक-लोकान्तर पिरोया रहता है और वह ऋतु और सत् में भ्रमण करता हुआ मानव को उज्ज्वलता प्रकट करता रहता है, उज्ज्वलता देता रहता है।

मुझे वह काल स्मरण आता रहता है जिस काल में याज्ञवल्क्य मुनि महाराज अपने आश्रम में विद्यमान रहते थे। ब्रह्मचारियों के मध्य में विराजमान हो करके वह ब्रह्मचारियों से उच्चारण कर रहे थे, हे ब्रह्मचारियो! आओ धर्म के ऊपर चिन्तन करना प्रारम्भ करेंगे। वह काल जब स्मरण आने लगता है तो हृदय गद्गद् हो जाता है। महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज के आश्रम में नाना ब्रह्मचारी प्रातःकालीन नाना समिधाओं को ले करके आचार्यों के चरणों में ओत-प्रोत हो गए और ऋषि से कहते हैं महाराज! हम याग करना चाहते हैं। ब्रह्मचारी जब कहते हैं कि याग करना चाहते हैं तो ऋषि कहते है कि याग किससे कर रहे हो? उन्होंने कहा याग मैं समिधाओं के द्वारा कर रहा हूँ। **समिधा किसे कहते हैं?** समिधा उसे कहते हैं जो अग्नि को चैतन्य, अग्नि को उद्बुद्ध कर देती है। परन्तु अग्नि कैसे उद्बुद्ध होती है? यह समिधाओं के द्वारा होती रहती है और समिधा जब अग्नि में प्रवेश कर जाती है तो अग्नि उद्बुद्ध हो जाती है। इसी प्रकार हमारे यहाँ समिधा जहाँ काष्ठ की समिधा होती हैं, जहाँ वृक्ष की समिधा होती हैं वहाँ मुनिवरो! देखो मानव के शरीर में जो याग होता है उसकी समिधा

क्या है? ब्रह्मचारियों से महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज कहते हैं कि हे ब्रह्मचारियों! तुम्हारे **हृदय में जो अग्नि प्रदीप्त हो रही है उसकी समिधा क्या है,** उसका वाजस्व कौन है? उसको उद्बुद्ध करने वाला कौन है? वेद के ऋषि ने जब ऐसा कहा तो ब्रह्मचारी कहते हैं हे प्रभु! हमारे शरीर की जो अगिन उद्बुद्ध होती है उसकी समिधा ज्ञान है, उसकी समिधा विवेक है जिसको धारण करने के पश्चात् मानव का जीवन धन्य हो जाता है और यह संसार उद्बुद्ध स्वाहा कह करके अपनी वाणी से आन्तरिक अपने को बाह्य जगत् में प्रवेश करा देता है और कहीं-कहीं बाह्य जगत् की अग्नि को आन्तरिक जगत् में प्रवेश करा देता है। तो परिणाम क्या? यह जो विशाल अग्नि है उस अग्नि को हम अपने में धारण करना चाहते हैं जो अग्नि लोकों में सूर्य को वर्चस्व बना रही है, तेजोमयी बना रही है। वही अग्नि है जो पृथ्वी के गर्भ में प्रवेश हो करके नाना प्रकार के खाद्य और खनिजों को उद्बुद्ध कर रही है। वही तेजोमयी अग्नि है जो नाना प्रकार की वनस्पतियों को ऊँचा बना रही है। वही अग्नि है जो माता के गर्भस्थल में एक बिन्दु प्रवेश करता है। उस एक बिन्दु के प्रवेश करने पर परमाणुओं की व्यवस्था, परमाणु विभक्त हो जाते हैं और परमाणु अपने-अपने आँगन में गति करना प्रारम्भ करते हैं और जब माता के गर्भस्थल में परमाणु गति करते हैं, उन्हीं परमाणुओं से वह धर्मम् जबपृहे लोकाः, वेद का ऋषि कहता है अपने-अपने धर्म और अपनी-अपनी आभा में, अपने-अपने कारण में प्रत्येक परमाणु लय हो करके, हम जैसे प्यारे पुत्रो का निर्माण माता के गर्भ-स्थल में होता है।

मेरे प्यारे! मुझे वह काल स्मरण आता रहता है कि जब मेरी प्यारी माता अनुसन्धान करती रही हैं। मुझे वह काल स्मरण है जब यहाँ मेरी प्यारी माता याग कर रही है और जब वह याग करती है तो उसका याग कैसा भव्य है कि उसका कोई व्रत करने वाला हो, अनुसन्धान करने वाला हो तो ब्रह्मलोक को प्राप्त हो जाती है। मेरी

प्यारी माँ, हे माँ! तू वास्तव में जीवन को उद्‌बुद्ध करने वाली है, प्रकाश में ले जाने वाली है। ममत्व को धारण करती हुई तू शरीर की अग्नि को उद्‌बुद्ध करने वाली है। वही अग्नि उद्‌बुद्ध हो करके अमृत में प्रवेश हो जाती है, अमृत में उसका परिवर्तन हो जाता है। वह माता का कितना व्यापक धर्म है और उस **धर्म को जो अपना लेता है वह कर्त्तव्यवाद की वेदी पर विराजमान हो करके अपने जीवन को ऊर्ध्वागति में ले जाता है, महान् बना लेता है।**

आज मैं मुनिवरो! देखो विशाल या विशेष चर्चा तुम्हें प्रकट करने नहीं आया हूँ। आज हम संक्षिप्त परिचय देने आए हैं और वह परिचय क्या है कि वैदिक ऋषियों ने नाना रूपों में इस संसार की कल्पना की है। **इस संसार को याज्ञिक पुरुषों ने यज्ञमयी माना है** परन्तु देखो यज्ञ में जिस भी वाक् को लेना प्रारम्भ करोंगे वही वाक् अनन्तता में तुम्हें दृष्टिपात आता रहेगा। प्रत्येक मानव विज्ञान के युग में प्रवेश करना चाहता है, वैज्ञानिक बनना चाहता है। आज मेरे प्यारे महानन्द जी मुझे नाना प्रकार की प्रेरणा देते रहते हैं–परमाणुवाद की विचारधारा पर ले जाना चाहते हैं। परन्तु आज से हमने बहुत पुरातन काल में निर्णय देते हुए कहा था कि संसार में मानव को अपने जीवन में शक्ति को उत्पन्न करना है वह शक्ति जो अभ्यास-गति बन करके, ओजस्व वर्चोसी बन करके मानव जीवन को महान् बना देता है अथवा पवित्र बना देता है। जिस पवित्रता का स्वरूप मानवीय जीवन में एक आभा बन करके रहता है अथवा विचित्र बन करके रहता है।

सुगन्धि का स्रोत

आज मैं तुम्हें एक ऋषि के आश्रम में ले जाना चाहता हूँ। एक समय का वाक् है मुनिवरो! देखो ऋषि व्रेतकेतु महाराज थे, व्रेतकेतु ऋषि महाराज जो दद्दड़ गोत्रीय कहलाते थे, परन्तु देखो वह उनका जो संस्कार हुआ वह शाँडिल्य गोत्र में हुआ। उनका संस्कार जब शाँडिल्य गोत्र में

हुआ तो वह नित्य प्रति याग करते थे। कैसा याग करते कि मुनिवरो! नाना साकल्य भयङ्कर वनों से एकत्रित करते रहते और याग करते रहते थे। वह विश्व ब्रह्माण्ड को, इस वायुमण्डल को पवित्र बनाते रहते थे और यह कहा करते थे कि सुगन्धि देना ही हमारा कर्त्तव्य है, सुगन्धि में लाना ही हमारा कर्त्तव्य है। तो इसलिए संसार में प्रत्येक मानव को सुगन्धि को लाना है वह सुगन्धि यागों के द्वारा आती है, वह विचारों के द्वारा आती है, वह सुगन्धि राष्ट्र के द्वारा भी आती है। जिस राजा के राष्ट्र में मुनिवरो! देखो सुगन्धि होती रहती है और सुगन्धि कैसी होती रहती है? मैंने बहुत पुरातनकाल में तुम्हें निर्णय देते हुए कहा था कि वह राजा सुगन्धि-सुगन्धि की स्थापना करता है, जिस राजा का जीवन सुचरित्र होता है। सुचरित्र जो जीवन होता है वह पाडित्य को लेकर के, भव्य ज्ञान को ले करके वह अपने राष्ट्र को ऊँचा बनाता है।

ऋषि मुनियों का महाराजा जाह्नवी से सम्वाद

मुझे वह काल स्मरण आता रहता है जब महाराजा जाह्नवी अपने आसन पर विद्यमान हैं परन्तु देखो ब्राह्मण समाज यह उच्चारण करता है चलो राजा जाह्नवी के द्वारा ब्रह्मज्ञान को प्राप्त करेंगे। तो मुनिवरो! देखो वह महाराजा जाह्नवी के आश्रम को नाना ब्राह्मण, वेद के जिज्ञासु वह महर्षि राजा जाह्नवी के द्वार पर पहुँचते हैं। जाह्नवी राजा मनु वंश में हुआ है। महाराजा जाह्नवी के समीप जब नाना ब्राह्मण पहुँचे, तो ब्राह्मणों ने यह विचारा, ऋषियों ने कि हम इनको मन ही मन में प्रणाम कर लेते हैं, हम मन ही मन में नमस्कार कर लेते हैं परन्तु जब तक हमें यह प्रतीत न हो कि यह राजा ब्रह्मज्ञानी है अथवा नहीं है। तो उन ऋषियों में से मुनिवरो! देखो ब्राह्मणों में एक ब्राह्मण की चुनौती हुई, ब्राह्मण को निर्वाचन किया और यह कहा कि तुम इस राजा से यह प्रश्न करो और राजा इसका क्या उत्तर देगा और उसके मस्तिष्क को दृष्टिपात करो कि वह वास्तव में ब्रह्मवेत्ता है या नहीं।

प्रातःकाल के याग की समिधा

मुनिवरो! कहा जाता है कि उनमें से महाराज वरुण, महर्षि वरुण ने महर्षि गौतम के पिता ने महाराज जाह्नवी के मस्तिष्क को दृष्टिपात करके यह कहा कि महाराज तुम जो प्रातःकाल याग करते हो वह कितनी समिधाओं से करते हो? तो मुनिवरो! देखो उस समय महाराजा जाह्नवी कहते हैं कि जो याग किया मैंने प्रातःकाल में वह तीन प्रकार की समिधा थीं, वह तीन समिधाओं से मैं याग करता हूँ। **वह तीन समिधा क्या हैं?** महाराजा जाह्नवी कहते हैं कि तीन जो समिधा है वह तीन समिधा जिससे मैं अग्न्याधान करता हूँ, अग्नि को प्रदीप्त करता हूँ वह तीन प्रकार की समिधा मेरे यहाँ ज्ञान, कर्म और उपासना कहलाई जाती हैं। वाह रे राजन्! राजा जाह्नवी क्या उत्तर देते हैं ऋषि को कि मैं अपने हृदय में उन अग्नियों को उद्बुद्ध कर रहा हूँ और प्रातःकाल में उद्बुद्ध करता हूँ, उन्हीं अग्नियों से मैं याग करता रहता हूँ, उसी बाह्य जगत् में याग करता हूँ, तीन समिधाओं से याग करता हूँ। तीन समिधा क्या हैं? ज्ञान, कर्म और उपासना के ऊपर चिन्तन प्रारम्भ रहता है। परन्तु उन्हीं को बाह्य जगत् में जाता हूँ तो अग्न्याधान करता हूँ, वह काष्ठ की तीन समिधा ले करके वह तीन ही क्यों मानी जाती हैं? क्योंकि वह त्रैतवाद को मुझे जागरूक बनाना है। मेरे हृदय में जो तीनों गुण हैं रजोगुण, तमोगुण और सतोगुण यह तीन समिधा को ले करके मैं अग्न्याधान करता हूँ। इसलिए कर रहा हूँ कि बाह्य जगत् भी मेरा यह लोक-परलोक यह त्रीवर्द्धम्, त्रीव्रतों में मेरा यह संसार पवित्र बन जाए। मैं राष्ट्र को तीन विभाग में विभक्त करना चाहता हूँ। ब्राह्मण, क्षत्रीय और वैश्य और शूद्र एक शूद्र को मैं नहीं ले रहा हूँ, तीनो विभागों में मैं अपने राष्ट्र का मैं अपनी प्रजा को एक सूत्र में लाना चाहता हूँ। इस प्रकार का विचार जब मुनिवरो! देखो राजा ने महाराजा जाह्नवी ने दिया तो ब्रह्मवेत्ताओं को, जिज्ञासुओं को प्रतीत हो गया कि राजा तो ब्रह्मवेत्ता है, और ब्राह्मण है।

मुनिवरो! उनके समीप विद्यमान हो गए और यह कहा कि महाराज हम आपसे यह जानना चाहते हैं कि यजमान तीन से याग कर रहा है वह तीन आपने प्रथम कैसे कहा था कि मैं ज्ञान, कर्म और उपासना के द्वारा याग कर रहा हूँ। ज्ञान, कर्म और उपासना में क्या-क्या दोनों में अन्तर्द्वन्द्व माना गया है। राजा कहते हैं कि ज्ञान कहते हैं इस संसार के प्रत्येक पदार्थ का ज्ञान हो जाना और प्रत्येक पदार्थ को ज्ञान में लाना ही उसकी मुझे एक समिधा बनानी हैं, समिधा का अभिप्राय यह है जो अग्न्याधान हो करके अग्नि में भस्म हो जाती है। वह जो मेरा विचार है, मेरा जो सँकीर्णवाद है, वह व्यापक बन करके वह ज्ञान में परणित हो जाए, ज्ञान में आभाहित हो जाए, ज्ञान और विज्ञान होगा तो मैं कर्मकाण्ड की पगडण्डी को जान सकता हूँ। कर्मकाण्ड में मेरी निष्ठा हो जाए, कर्मकाण्ड में मैं आभा में निहित हो जाऊँ तो वह मेरी उज्ज्वल समिधा है। ज्ञान, कर्म और उपासना उसके पश्चात् परमात्मा को अपने को समर्पित कर सकता हूँ, परमात्मा को समर्पित करना बहुत अनिवार्य है। जिस प्रकार माता अपने बालक को गर्भस्थल में धारण करती हुई अपने को बालक में रत्त कर लेती है, इसी प्रकार देखो मैं अपने को रत्त करना चाहता हूँ। वह तीन समिधा हैं, समिधा का अभिप्राय यह कि मेरी अन्तिम जो समिधा है मेरे शरीर और विचारों की समिधा बन करके वह अग्न्याधान जब परमात्मा ब्रह्म को प्राप्त होती चली जाएँ, ब्रह्म में निष्ठित हो जाऊँ ऐसा विचार वह दे रहा था।

राष्ट्र को ऊँचा बनाने वाली तीन समिधा

परन्तु आगे ब्राह्मणों ने कहा कि प्रभु वह तीन प्रकार की समिधा कौन-सी हैं जिनसे यह राष्ट्र ऊँचा बनता है, राष्ट्र को भव्य बनाया जाता है। उस समय राजा ने कहा कि तीन प्रकार की समिधा वह कहलाती हैं जो राष्ट्र को ऊँचा बनाती हैं। सबसे प्रथम जिसमे चटाचट होती हो, जिसमें चरणिन्त होती हो, उसका अभिप्राय यह कि मेरे राष्ट्र में

बुद्धिमान विशेष हों और बुद्धिमान के द्वारा यह राष्ट्र, समाज ऊँचा बनता है। जब बुद्धिमान जिस भी काल में होते हैं, जिस गृह में बुद्धिमान पुरुष होते हैं उस राजा का राष्ट्र पवित्र होता है। परन्तु इसी प्रकार मेरी वह प्रारम्भ की जो समिधा है उससे ही मैं अपने राष्ट्र में ब्राह्मणों को ओजस्वी बनाता हूँ। मुनिवरो! देखो राजा जाह्नवी कहते हैं कि मेरे यहाँ एक समय ब्रह्मवेत्ता स्वर्णकेतु ऋषि महाराज आए और स्वर्णकेतु ऋषि महाराज ने यह कहा कि महाराज मेरे जो आचार्य हैं, मेरे जो पितर हैं, आचार्य मैं उनके कुल में अध्ययन कर रहा हूँ परन्तु उनके कुल में बुद्धिमान तो बहुत हैं परन्तु वहाँ भगवन् देखो द्रव्य की हीनता हो गई है। मैं द्रव्य चाहता हूँ। तो मुनिवरो! देखो महाराजा जाह्नवी कहते हैं ब्रह्मवेत्ताओं से मैंने द्रव्य को प्रदान किया और यह कहा कि जाओ ब्रह्मचारी ले जाओ क्योंकि विद्यालय पवित्र होने चाहिएँ, विद्यालय में बुद्धिमत्ता होनी चाहिए इससे मेरा राष्ट्र पवित्र बन जाए। महाराजा जाह्नवी ने कहा कि **मेरी सबसे प्रथम समिधा ब्राह्मण मेरे राष्ट में हों, द्वितीय मेरे यहाँ क्षत्रिय हों जिन क्षत्रियों से मेरा राष्ट्र बलिष्ठ होता है, पवित्र बनता है और उनमें धर्म पिरोया हुआ रहता है। इसी प्रकार तृतीय जो समिधा है वह वैश्व होनी चाहिए,** वैश्व अपने द्रव्य को, कृषक उद्यम करने वाला हो, कृषक से जो द्रव्य आता है और भी नाना प्रकार का व्यापार बनज होता है, जिससे राष्ट्र की आभा बनती है, पवित्रतम बनती है। आज वह मेरे यहाँ ऊँचे होने चाहिएँ, सुचरित्र होने चाहिएँ, उनकी किसी प्रकार की हीनता न हो तो मेरा राष्ट्र पवित्र होगा।

अग्न्याधान की समिधा

परन्तु देखो उस समय उन्होंने कहा तो प्रभु आप जिन याज्य से अग्न्याधान करते हो वह समिधा कौन-सी है? उन्होंने कहा वह समिधा मेरे यहाँ जिससे मैं प्रातःकालीन याग करता हूँ, मैं और मेरी पत्नी जो

याग करते हैं सबसे प्रथम हम ब्रह्म चिन्तन करते हैं, ब्रह्मयाग करते हैं और ब्रह्मयाग के पश्चात् हम देवपूजा करते हैं और देवपूजा के पश्चात् हम अतिथि की सेवा करते हैं। यह तीन याग हमारे राष्ट्र में तीन प्रकार की यह समिधा कहलाती हैं। सबसे प्रथम ब्रह्म का चिन्तन होता है, ब्रह्म के चिन्तन का अभिप्राय यह कि ब्रह्म की आभा में रमण करते रहते हैं। यह ब्रह्म क्या है? हमारे यहाँ प्रथम नियम माना है पवित्रतम् में कि पति-पत्नी अपने-अपने स्थान पर विराजमान हो करके प्रातःकाल अपने आसन को साफ करके ब्रह्म का चिन्तन करते हैं और चिन्तन करने की हे ब्राह्मणों! मेरे राष्ट्र में कोई ऐसा गृह नहीं है जिस गृह में ब्रह्म का चिन्तन न होता हो। पति-पत्नी ब्रह्म का चिन्तन न करते हों, एक आसन पर विद्यमान हो करके ब्रह्म क्या है ब्रह्म किसे कहते हैं? यह ब्रह्म क्या है इस ब्रह्म में इस संसार को पिरोया हुआ है, जिस ब्रह्म में हम अपने उस मानवीय आभा को पिरोने वाले हैं तो वह ब्रह्म का चिन्तन प्रत्येक राजा के प्रत्येक समाज में, गृह में होता रहता है, जिससे गृह में सात्विकता आ जाए, मानवता आ जाए और मानवता आ करके शिष्टाचार आ जाए, सदाचार आ जाए, क्योंकि ब्रह्म के चिन्तन से नाना लाभ होते हैं। ब्रह्म का चिन्तन करने वाले पति-पत्नियों के गृह में सन्तान बुद्धिमान होती है।

राजा जाह्नवी ने बहुत पुरातनकाल में कहा था। मेरे यहाँ मेरे राष्ट्र में भोगवाद नहीं है, मेरे राष्ट्र में तो केवल शिष्टाचार है, मेरे राष्ट्र में याग होते हैं और याग भी भिन्न-भिन्न प्रकार के, माता-पिता यह चाहते हैं कि हमें सन्तान को जन्म देना है, हमें सन्तान को उत्पन्न करना है तो माता-पिता चिन्तन करते हैं और चिन्तन करने के पश्चात् वह अपनी-अपनी हवि को अपने-अपने आसन पर परणित कर देते हैं। उससे सुसन्तान का जन्म होता है और वह जो सुसन्तान है वही गृह को ऊँचा बनाती है और जो माता-पिता अपने बाल्य को ऊँचा नहीं बना सकते, महान् नहीं बना सकते, ब्रह्मचरिष्यामि नहीं बना सकते उन माताओं का

जीवन न होने के तुल्य कहलाता है। वह माता सौभाग्यनी होती है जो माता अपने गर्भस्थल में माता मदालसा की भाँति अपने प्यारे पुत्र को गर्भाशय में ब्रह्म का उपदेश देने वाली है। वह गृह धन्य होते हैं, वह राष्ट्र धन्य होता है जिस राजा के राष्ट्र में ब्रह्म का चिन्तन होता हो।

देवपूजा

प्रत्येक गृह अपने आश्रम में ब्रह्म का चिन्तन करने वाले हों और उसके पश्चात् वह देवपूजा करने वाले हों, देवपूजा कौन करता है? देवपूजा वह माता-पिता करते हैं जिनके गृह में सुगन्धि होती है, बाल्य ऊँचे बनते हैं। माता-पिता प्रातःकालीन देवपूजा करते हैं, देवपूजा किसे कहते हैं? समिधा को अग्न्याधान किया, अग्नि प्रदीप्त हो गई है और उसमें स्वाहा कहते हैं अपनी वाणी को अग्नि की तरङ्गों पर विश्राम करा करके वह द्यौ लोक को प्राप्त हो जाता है, वह द्यौ लोक में प्रवेश कर जाती है। वह देवपूजा कैसा स्वच्छ हृदय है, परमात्मा की वाणी से कहता आचार्य उद्बुद्ध स्वाहा अग्नि मानव उद्बुद्ध करता है और स्वाहा अग्नि कह रहा है। हे उद्बुद्ध होने वाली अग्नि! तू अन्तरिक्ष में रमण करने वाली है तू द्यौ लोक का प्राप्त होने वाली है। वह माता-पिता धन्य हैं जो अपनी वाणी को द्यौ लोक में पहुँचा देते हैं अन्तरिक्ष में पहुँचा देते हैं। अग्नि की धाराओं पर विद्यमान हो करके वह वाणी अपने स्वरूप को ले करके द्यौ लोक को प्राप्त हो जाती है। परिणाम क्या? देवताओं का दूत कौन है? वह देवताओं का दूत ही तो अग्नि कहलाती है। अग्नि महान् है।

अतिथि सेवा

तृतीय जो समिधा है जो जीवन में प्रदीप्त होती है वह अतिथि की सेवा है। अतिथि की सेवा किसे कहते हैं? बुद्धिमान गृह में आता है और बुद्धिमान का स्वागत करते हैं और बुद्धिमान का जब स्वागत

होता है तो बुद्धिमान प्रसन्न होता है, योगेश्वर प्रसन्न होता है और जब वह प्रसन्न होता है तो मुनिवरो! देखो अपने पुण्य को दे करके वह वहाँ से प्रस्थान करता है जो उसने अध्ययन किया है, शिक्षाओं का आकृत किया है। उस शिक्षा को गृह को दे करके वह अपने आसन को प्रस्थान करता है।

आत्मा की समिधा

मुनिवरो! उस समय महाराजा जाह्नवी ने जब यह ब्रह्मवेत्ताओं को कहा, तो उन्होंने कहा धन्य है प्रभु! उन्होंने कहा प्रभु हम तो आत्मा की समिधा को जानना चाहते हैं प्रभु! जिससे आत्मवेत्ता बनता है पुरुष। यह तो हमने साधारण उपदेश आपसे पाया है, परन्तु हम यह जानना चाहते हैं कि **आत्मा का उत्थान कौन-सी अग्नि से, कौन-सी समिधा से होता है,** जिससे हम आत्मवेत्ता बनें और आत्मा में प्रवेश करते हुए आत्मवत् को प्राप्त होते रहें। मेरे प्यारे महाराजा जाह्नवी ने कहा कि आत्मा का उत्थान करना है। हे ब्रह्म जिज्ञासुओं! हे आत्मा के जिज्ञासुओं! आज यदि तुम यह चाहते हो कि हम आत्मा का कल्याण चाहते हैं आत्मा को ऊर्ध्वागति में ले जाना चाहते हैं तो 'ब्रह्मचरिष्यामि देवत्व ब्रह्म लोकाः' आज मैं तुम्हें एक ही वाक् प्रकट करा देता हूँ जहाँ यह जो ब्रह्म की चर्या है, ब्रह्मचर्य जो हमारे शरीर में प्रवास है, गति कर रहा है इसको प्राण के द्वारा प्राण रूपी तरकस से तीर की भाँति इसका ओजस्व करा दो और उससे आत्मा मनस्तत्व पृहे लोकाः एक ही लक्ष्य रहता है कि आत्मा को जानना है। जब उस पर, धनुष पर तीर रख लिया जाता है तो उसका लक्ष्य ब्रह्म को प्राप्त करना, वह ब्रह्म का यह प्राण प्राणायाम् करना और प्राण के द्वारा उस आत्मा को जानना क्योंकि मन को आत्मा के, आत्मा मन को प्राण रूपी तरकस के ऊपर तीर की आभा में अभ्यस्त करा देना चाहिए, जिससे वह आत्मा में प्रवेश कर जाए और आत्मवत् जो है यह आत्मा का ज्ञान ही संसार में एक मानवता को प्रवेश करा देता

है। **आत्मज्ञान है जो राष्ट्र को ऊँचा बनाता है, आत्म ज्ञान है जो मोक्ष को ले जाता है,** आत्मा का जो बलिष्ठ प्राणी होता है वह सन्तान से हीन नहीं हो सकता। वह अपने जीवन में ऊँचे कर्मों से हीनता को प्राप्त नहीं होता। इसीलिए मैंने बहुत पुरातनकाल में अपने प्यारे महानन्द जी के प्रश्नों का उत्तर देते हुए कहा था कि मानव को अपनी आत्मा को ऊर्ध्वा बनाना चाहिए। आत्मवत् जो पुरुष होता है उसके शरीर में वीरत्व होता है और जो वीरत्व होता है वह देखो जहाँ देवयाग करता है, वहाँ पितर याग मे ंसफलता को प्राप्त होता है। मैंने बहुत पुरातन काल में अपने वाक्यों को प्रकट करते हुए कहा था जिस संसार में मानव को अपने जीवन को ऊँचा बनाना है अपने जीवन में आत्म-तत्त्वों को प्राप्त करना है, आत्म ब्रह्मलोकों को प्राप्त करना है।

आज का हमारा यह वाक् क्या कह रहा है? आज मैं यह महाराजा राजा जाह्नवी के वाक्यों को प्रकट कर रहा हूँ। महाराजा जाह्नवी जहाँ ब्रह्मवेत्ता जहाँ वह राष्ट्र में कुशल थे, वहाँ आत्मवत् को जानते थे, वहाँ ब्रह्मवेत्ता भी कहलाए जाते थे। ब्रह्म जिज्ञासुओं ने जब यह वाक् प्रकट किया तो उस समय उन्होंने कहा कि महाराज **आत्मा का सन्तान का क्या सँग्रह है।** आज जो आपने सन्तान को कहा है, अथवा पुत्र को कहा है। उस समय महाराजा जाह्नवी कहता है कि यह मानव के जीवन में स्वाभाविक परिणाम की इच्छा होती है। एक मानव माता-पिता जो अपने गृह में कर्म करते हैं, तो कर्म करने के पश्चात् मानव को परिणाम की इच्छा होती है। उस परिणाम में मानव का यह स्वभाव बन जाता है कि वह पितरयाग करता है और पितर बनने की उसे स्वतः एक आत्मा की पिपासा जागरूक होती है। इसीलिए मैंने यहाँ पुत्र की आभा उच्चारण की है। महाराजा जाह्नवी के इन वाक्यों को पान करने वाले ऋषियों ने कहा कि प्रभु हम यह जान सकते हैं कि **आत्मा के मोक्ष का पुत्र का क्या सम्बन्ध है?** उन्होंने कहा कि मोक्ष का और पुत्र का विशेष कोई सम्बन्ध नहीं है परन्तु जो मानव त्यागपूर्वक

रहता है इस संसार में त्याग से रहता है क्योंकि पितर जो होता है और पुत्र जो होता है, वह माता-पिता का हृदय होता है। परन्तु वह जो हृदय है वही तो हृदय वर्चोसी बना देता है और जो हृदय है, एक हृदय को त्याग करके एक हृदय को देवगति को प्राप्त कराता हुआ वह मोक्ष की पगडण्डी को प्राप्त कर लेता है। परन्तु देखो मैंने बहुत पुरातनकाल में अपने वाक्यों को निर्णय देते हुए कहा था। महाराजा जाह्नवी ने जब यह वाक् कहा तो ऋषिवर उनके वाक्यों से सन्तुष्ट होने लगे। उन्होंने कहा कि महाराज मोक्ष में क्या होता है? पुत्र की आभा तो समाप्त हो जाती है। उन्होंने कहा कि जैसे मानव यह आत्मा और परमात्मा का पुत्र है और मोक्ष में जाने के पश्चात् वह परमात्मा को प्राप्त हो जाता है, परमात्मा में आभाहित आनन्द को प्राप्त हो जाता है। इसी प्रकार पुत्र बनने में ही मानव अपने ब्रह्म वेग ब्रह्मज्ञान को प्राप्त कर सकता है। जैसे आचार्य कुल में प्रवेश हो करके शिष्य जब ब्रह्मज्ञान की आभा में रमण करता है और ब्रह्मज्ञान को प्राप्त करने के लिए उसकी उत्कृष्ट इच्छा होती है तो मुनिवरो! वह पुत्र बन करके, शिष्य बन करके उनके चरणों को छू करके वह ब्रह्मज्ञान को प्राप्त करता है। क्योंकि देखो वह उसका पुत्र है, क्योंकि पुत्र ही पिता के आँगन को प्राप्त हो जाता है। पिता के आँगन में प्रवेश करके जैसे मोक्ष में जाने वाला आत्मा प्रकृति की तरङ्गों को त्याग करके वह परमात्मा ब्रह्म रूपी पितर के द्वार पर प्रवेश कर जाता है, उसी प्रकार शिष्य अपने गुरु के द्वार में प्रवेश कर जाता है, वह ब्रह्मज्ञानी बनता है। ब्रह्मज्ञानी बन करके उसको क्रिया में लाता है क्रिया में ला करे वह रजोगुण, तमोगुण को समाप्त करता है वह उनमें प्रवेश करके ब्रह्म को प्राप्त हो जाता है।

राजा ब्रह्मवेत्ता हो

आज मैं विशेष चर्चा तुम्हें प्रकट करने नहीं आया हूँ। विचार यह देने को आया हूँ आज मैं तुम्हें यह वाक् प्रकट करने को आया हूँ कि

राजा को ब्रह्मवेत्ता होना चाहिए। जब राजा के राष्ट्र में राजा ब्रह्मवेत्ता होता है तो उस समाज के उस प्रजा के वैभव को कोई भी मानव नष्ट नहीं कर सकता, क्योंकि उसका राजा ब्रह्मवेत्ता है, वह ब्रह्मवेत्ता बन करके ब्रह्म में लीन रहता है, ब्रह्म में समाधिष्ठ रहता है। अपने वैभव की उसे चिन्ता नहीं होती वह अपने कर्त्तव्य का पान कर रहा है। प्रातःकाल याग कर रहा है मानव समय पर अपने अन्न का शोधन कर रहा है। तो वह जो राजा है, वह ऊँचा है तो इसलिए वेद का ऋषि कहता है, आचार्य कहता है कि राजा तो ब्रह्मवेत्ता होना चाहिए। राजा ब्रह्मवेत्ता वह होता है, जो ब्रह्मचरिष्यामि जो ब्रह्म को जान लेता है, ब्रह्म के परमाणुओं को जान लेता है वह देवता बन जाता है वह प्रत्येक परमाणु पर अपना अनुशासन कर लेता है और जो अनुशासन नहीं कर सकता वह प्राणी नहीं कहलाता संसार में, वह पामर कहलाया जाता है। इसीलिए प्रत्येक मानव को, प्रत्येक मेरी पुत्री को प्रत्येक माता को प्रत्येक ऋषि-मुनि को अपने जीवन में अनुसन्धान की आवश्यकता है और प्रतिभा को प्राप्त करने की आवश्यकता है जिससे यह संसार ऊँचा बनता है, महान् बनता है, पवित्र बनता है **और उस पवित्रता को लाने के लिए मानव को तप की आवश्यकता होती है।**

याग का स्वरूप और उसकी महिमा

यह है आज का हमारा वाक्, आज वेद का ऋषि यह क्या कर रहा है? आज के वेद के ऋषि की वार्ता को श्रवण करके हमारा अन्तरात्मा गद्गद् हो गया। यह कहा है कि हम प्रत्येक रूप में याग करते हैं और यही हमारा धर्म है और धर्म मानवता का दोनों का घनिष्ठ सम्बन्ध रहता है और मानवता धर्म से ही संसार ऊँचा बनता है, धर्म में पिरोया हुआ है यह संसार। क्योंकि वाणी से ले करके मानव की प्रत्येक इन्द्रियाँ धर्म में पिरोई हुई हैं, एक सूत्र में पिरोई हुई हैं। उन्हें कौन धारण करता है? जो जिज्ञासु होता है, जो विवेकी होता है, वही

उनको अपने में धारण करता है। अन्यथा इनको धारण नहीं किया जाता है।

मैं विशेष चर्चा तुम्हें प्रकट करने नहीं आया हूँ। **आज मैं तुम्हें यह वाक् प्रकट करने आया था** कि प्रत्येक मानव, प्रत्येक देवकन्या को अपने जीवन को ऊँचा बनाना है और मानवीयता को महानता के मार्ग पर ले जाना है; परमात्मा को प्राप्त होना है, दर्शन को पाना है। हे मानव! मानव का दर्शन क्या है मानव को अपने स्वतः अन्तरात्मा में प्रवेश हो करके जानना चाहिए कि उसका स्वतः मानवीय दर्शन क्या है। **स्वतः अपने को जानना ही एक मानवता है।** जो याग हो रहा है। वह यागाम् ब्रह्म समिधा स्वाहा, वह स्वाहा कह करके याग कर रहा है, स्वाहा का अभिप्राय क्या? जिससे अग्नि उद्बुद्ध होती है, स्वाहा से अग्नि उद्बुद्ध होती है। इस स्वाहा को हमने, मेरे प्यारे आचार्य ऋषि-मुनियों ने वेद से जाना तो ऐसा कहा कि जो मानव अग्नि के समीप विद्यमान हो करके स्वाहा कहता है उसकी वाणी का परमाणुवाद जितने आकार का वह मानव शरीर बना हुआ है उतने ही आकार का परमाणुवाद मुनिवरो! देखो अग्नि की धाराओं पर विद्यमान हो करके वह अन्तरिक्ष को प्राप्त हो जाता है। स्वाहा स्वच्छ होना चाहिए। स्वाहा हृदय से स्वच्छ होना चाहिए, जिससे कि वायुमण्डल पवित्र बन जाए, गृह पवित्र बन जाए। मुझे वह काल स्मरण आता रहता है, मैंने वह अध्ययन किया हुआ अध्याय जो किसी काल में ब्रह्मा के पुत्र अथर्वा ने एक याग किया था अपने गृह में एक याग किया था। याग करने के पश्चात् अपनी पत्नी से कहते हैं कि हे देवी! एक सन्तान को जन्म देना है। जन्म देने से पूर्व एक याग करना है। उन्होंने छः माह तक ब्रह्मचर्य को धारण करके उन पति-पत्नी ने मुनिवरो! देखो भयङ्कर वनों में साकल्य एकत्रित किया, औषधियाँ एकत्रित करने के पश्चात् उन्होंने याग किया और वह स्वाहा उच्चारण किया स्वच्छ हृदय से, स्वच्छ मन्त्र हैं, कहाँ व्यञ्जन आना चाहिए कहाँ स्वर होना चाहिए। याग करने के पश्चात्

उनके यहाँ एक महान् बालक का जन्म हुआ। तो हमारे यहाँ याग की बहुत महिमा मानी गयी है। **प्रत्येक शुभ कर्म याग के द्वारा सम्पन्न होते हैं।**

आज का वाक्य अब हमारा समाप्त होने जा रहा है। वाक्य उच्चारण करने का अभिप्राय यह कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए इस संसार-सागर के पार हो जाएँ। आज का वाक्य समाप्त, अब वेदों का पठन-पाठन होगा।

पूज्य महानन्द जी– धन्य हो भगवन्!

अच्छा भगवन्!

दिनाँक : 19 मार्च, 1973
समय : रात्रि 8:30 बजे
स्थान : श्री ब्रजेश कुमार त्यागी
ग्राम ईकड़ी, मेरठ

सूचना

पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज द्वारा संस्थापित वैदिक अनुसन्धान समिति (पञ्जी) दिल्ली को दानदाताओं द्वारा दान देने पर आयकर विभाग की धारा 80 जी के अन्तर्गत छूट 26-9-2914 को मिल गई है जो कि 2015-2016 से लागू है।

वैदिक अनुसन्धान समिति (पञ्जी.)

।। ओ३म् ।।

महर्षि लोमश और काग्भुषुण्ड जी
(प्राण-सूत्र)

जीते रहो!

देखो मुनिवरो! आज हम तुम्हारे समक्ष पूर्व की भाँति कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से जिन वेद मन्त्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहाँ इन वैदिक साहित्यों में, वैदिक मन्त्रों में भिन्न-भिन्न प्रकार का वर्णन होता रहता है। क्योंकि वास्तव में यह वैदिक जो ज्ञान है यह परमपिता परमात्मा की प्रतिभा कहलाती है जिससे परमपिता परमात्मा में निष्ठा होती है और वह परमपिता परमात्मा का ज्ञान और विज्ञान है इसमें प्रत्येक मानव परम्परागतों से ही अनुसन्धान करता रहा है। बहुत पुरातनकाल हुआ ऋषि-मुनि एक-एक वेद मन्त्र के ऊपर उसके गर्भ में परणित हो करके एक ऊँची उड़ान उड़ते रहे हैं। परन्तु ऋषि-मुनियों का 'एक विशेषतम् ब्रह्मवाचाः वर्णोति हिरण्यम्' एक मन्तव्य रहा है कि परमपिता परमात्मा का जो ज्ञान और विज्ञान है वह इतना नितान्त है और इतना विचित्र है कि हम उस ज्ञान को चिन्तन और मनन में लाने वाले मौन हो जाते हैं। प्रत्येक अवस्था में मानव मौन हो जाता है। तो वह जो मौन की प्रवृत्ति मानव के हृदय में प्रविष्ठ हो रही है। एक बड़ा विचित्र, गम्भीर ऋषि-मुनियों के समीप अध्ययन के प्रतिक्रियाएँ उनके समीप आती रहती हैं।

बाह्य यज्ञ और आन्तरिक यज्ञ

आज मैं कोई विशेष विवेचना तुम्हें देने नहीं आया हूँ, केवल कुछ परिचय देने के लिए आया हूँ। क्योंकि ऋषि-मुनियों ने यही कहा कि

हम परमपिता परमात्मा की सृष्टि में सब शिशु के रूप में दृष्टिपात आते हैं। कितना ही ज्ञान और विज्ञान में रमण कर जाएँ परन्तु जब उसके अन्तिम छोर पर हम परणित होते हैं तो शिशु के रूप में। बहुत पुरातनकाल हुआ मुझे वह काल स्मरण है जब महर्षि लोमश और महर्षि काग्भुषुण्ड जी अपने-अपने स्थलियों पर विद्यमान हो करके बहुत गम्भीर अध्ययन करते रहते थे। एक समय महर्षि लोमश जी ने काग्भुषुण्ड जी से यह प्रश्न किया कि महाराज यह बाह्य यज्ञ और आन्तरिक यज्ञ क्या है? तो मुनिवरो! देखो! काग्भुषुण्ड जी ने महर्षि जी से कहा कि बाह्य जगत् और आन्तरिक जो यज्ञ है यह बाह्य जो प्रवृत्ति वाला यज्ञ हो रहा है उस यज्ञ का समन्वय परमपिता परमात्मा के सृष्टि यज्ञ से माना गया है। परन्तु यह जो आन्तरिक यज्ञ हो रहा है इसमें जो सप्त होता बने हुए हैं, वह नाना प्रकार की वस्तुओं को ला-ला करके हृदयरूपी यज्ञमाला में वह यज्ञ कर्म कर रहे हैं, अथवा वह जो ज्ञानरूपी अग्नि प्रदीप्त हो रही है उस ज्ञान रूपी अग्नि में बाह्य जगत् से साकल्य ला करके आन्तरिक जगत् में जो यज्ञ हो रहा है वह एक बड़ा विचित्र यज्ञ हमें दृष्टिपात आता है। क्योंकि जो भी यज्ञ आन्तरिक जगत् में हो रहा है वह प्रत्येक इन्द्रियाँ जो श्रोता बनी हुई हैं वह साकल्य को ला करके एकत्रित करके हृदय में प्रवेश कर देती हैं। उससे मुनिवरो! देखो संस्कारों का जन्म होता है। संस्कारों की उपलब्धियाँ होती हैं। उन्हीं संस्कारों का समन्वय हमारा चित्तमण्डल में प्रवेश करता है। **चित्तमण्डल का सम्बन्ध अहँकार से होता है।** अहँकार का सम्बन्ध ही चतुषन्तकरण से बन करके, वह प्रकृति का विशाल मण्डल हमें दृष्टिपात आता है तो बेटा! यह यौगिकवाद वाक् कहलाते हैं। आज मैं तुम्हें एक विशाल क्षेत्र में ले गया कि महर्षि काग्भुषुण्ड जी ने महर्षि लोमश मुनि को यह वाक्य प्रकट कराया। परन्तु देखो उन्होंने कहा कि इसका कोई छोर? तो काग्भुषुण्ड जी ने कहा कि मानव चिन्तन और मनन करता ही रहता है। जितना भी संसार का औसध है जितना भी संसार का रूप हमें

दृष्टिपात आता है परन्तु जब इसको जान लेते हैं तो मौन हो जाते हैं। जब मौन हो जाते हैं तो मौन होने के पश्चात् वही शिशु के शिशु बन जाते हैं। क्योंकि जैसे बाल्य आपदा में पीड़ित हुआ, आपदा जैसे शान्त हुई और वह बालक मौन शिशु बना रहता है। परन्तु देखो इसी प्रकार परमपिता परमात्मा के अनुपम जगत् में प्रत्येक मानव शिशु के रूप में रहता है। चाहे कोई कितनी भी विशाल उड़ान उड़ने वाला हो।

माता-पिता के उपदेश

मुझे वह काल स्मरण आता रहता है जिस समय काग्भुषुण्ड जी प्राणायाम और साधना में परणित होते थे। महर्षि लोमश और काग्भुषुण्ड जी दोनों अपनी आभा में रमण करते रहते थे। महर्षि काग्भुषुण्ड जी का जब बाल्यकाल था तो माता के चरणों में जब ओत-प्रोत होता, तो माता बाल्यकाल में उसे ज्ञान देती रहती थी। एक समय काग्भुषुण्ड जी से कहा हे बालक! उनका बाल्यकाल का नाम सम्भुख ऋषि था। सम्भुख नामक बालक था, ब्रह्मचारी था। सम्भुख ऋषि जब माता की लोरियों का पान करता रहता था, तो माता का नाम राकेश्वरी था। जब राकेश्वरी अपने बालक को लोरियों का पान कराती रहती तो यह कहती रहती 'सम्भवा देवो ब्रह्मवाचा दिव्यंगतम् प्रमाणं रुद्रो वाचाः' राकेश्वरी ने कहा कि हे बालक! तुमने मेरे गर्भ से जन्म लिया है, तू महान् है, पवित्र है आत्मा चैतन्य होता है, तू आत्मा है, तू अज्ञान में रत्त रहने वाला नहीं है। तू यौगिक है, तू योग में परणित होने वाला बन। यह माता के उपदेशों को पान करता हुआ बालक अपने में रत्त था। बालक अपने में माता के शब्दों को निहारता रहता था, लोरियों का पान करता रहता था। जब वह माता के गर्भ से अर्थात् जब वह लोरियों से पृथक् हुआ तो वह पिता के द्वार पर, पिता भी उसे यह उपदेश देते रहते थे, हे बालक! तेरा जीवन महान् बनना चाहिए। क्योंकि हमारा गृह सदैव ब्रह्मवेत्ताओं का रहा है। ब्रह्मवेत्ताओं

का यहाँ, ब्रह्म जिज्ञासु हमारे गोत्र में रहते चले आए हैं और तुम भी ब्रह्मवेत्ता ही बनो। परन्तु देखो ब्रह्म की जिज्ञासा में जो प्राण सूत्र को जानने वाला बनता है, वही ब्रह्म की धाराओं में रमण करने वाला होता है। तो मुनिवरो! देखो काग्भुषुण्ड जी के उस बालक के नामकरणों ब्रह्मवाचाः वह जो पिता थे वह श्वेतकेतु ऋषि महाराज थे। श्वेतकेतु ऋषि महाराज पारागोत्र में होते थे। क्योंकि पारागोत्र का जो निकास हुआ था वह किसी काल में सम्भो वाचम् ब्रही कुटकुट गोत्र से हुआ था; कुटकुट गोत्र जो निकास था वायु गोत्र से हुआ था। वायु गोत्र का जो निकास हुआ था वह ब्रह्मा के पुत्र अथर्वा से हुआ था; ब्रह्मा के पुत्र अथर्वा से वेदों की प्रतिभा, व्याकरण की धाराओं का जन्म प्राप्त होता रहा है। काग्भुषुण्ड जी को जब यह वाक्य पिता ने प्रकट किया, तो वह विद्यालय में प्रवेश हो गए।

आचार्य का सानिध्य

काग्भुषुण्ड जी के आचार्य का नामोकरण महर्षि समीतकेतु महाराज था। समीतकेतु ऋषि महाराज वर्तेतु ऋषि के पुत्र कहलाते थे। उनके यहाँ उनका यह संस्कार अब्रहे विद्या का संस्कारों का आचार्य के कुल में हुआ। आचर्य उसे शिक्षा देते रहे। परन्तु जैसे कागा प्रवृत्ति वाला पक्षी होता है, वह कागा प्रवृत्ति उसकी चञ्चल होती है। इसी प्रकार वह बाल्य विद्यालय में कागा प्रवृत्ति वाला ब्रह्मचारी था, चञ्चल था। जब वह अध्ययन करने लगा तो उसका जो क्रियाकलाप था वह प्राण सूत्र की चर्चा करता रहता था। प्राण-सूत्र में अपने को पिरोता रहता था। प्राण-सूत्र की विवेचना करता हुआ प्राण में रत्त रहता था। तो आचार्य ने उनका नामोकरण काग्भुषुण्ड जी, जैसे कागा प्रवृत्ति वाला एक पक्षी होता है वह कागम् वृहे वृत्ति देवाः वह अपने में चञ्चल रहता है। अपने तक उसका जीवन सीमित रहता है। परन्तु वह दूसरों के लिए शिक्षाप्रद होता है कि **मानव को अपने कार्य में रत्त रहना चाहिए।**

अपने कार्य में अपनी प्रवृत्तियों में चिन्तन रहना चाहिए। अपने में गम्भीर रहना चाहिए। काग्भुषुण्ड जो नाम कागा चञ्चल है और भुषुण्ड नामा बृहे व्रताम् जो वेद के पठन-पाठन करने में उसकी प्रवृत्तियों में रमण करने वाला हो उसको भुषुण्ड जी कहते हैं। तो चञ्चल कागा जैसा हो और वेद का अध्ययन करने वाला गम्भीर रहस्यों का उद्धृत करने वाला उसका नामोकरण वाला काग्भुषुण्ड कहा गया है। वह अध्ययनशील रहते हुए वह महान् प्राण की चर्चा करते रहते थे।

अपने को प्राण-सूत्र में पिरोते हुए एक समय अपने पूज्यपाद गुरुदेव से उन्होंने यह कहा है प्रभु! मैं प्राण-सूत्र को जानना चाहता हूँ, **यह प्राण-सूत्र क्या है?** तो आचार्य जी ने कहा कि प्राण-सूत्र प्राणों को कहा गया है, यह सर्वत्र ब्रह्माण्ड एक प्राण-सूत्र में पिरोया हुआ है। प्राण-सूत्र में अपने को जो मानव पिरो देता है, वह इस संसार सागर से पार हो जाता है। प्राण-सूत्र क्या है? हमारे यहाँ भिन्न-भिन्न प्रकार की प्राणों की प्रतिक्रियाएँ मानी जाती हैं। प्राण के आधार पर मानव का जीवन न्यौछावर रहता है। प्राण ही है जो प्रत्येक लोक लोकान्तरों को एक सूत्र में पिरोने वाला, एक तारा-मण्डलों की माला बनी हुई है और एक सूत्र में पिरोई हुई है। वही तो प्राण-सूत्र कहलाता है। जैसे मानव का शरीर है–मानव के शरीर में नाना प्रकार के संस्कार विद्यमान होते हैं। नाना प्रकार की आभाएँ उसमें दृष्टिपात आती हैं। जैसे चन्द्रमा की यात्रा में रत्त होने जा रहा है। चन्द्रमा का यान और विज्ञान उसके मानवीय मस्तिष्कों में नृत्य कर रहा है। तभी तो उसको चन्द्रमा का ज्ञान होता है। वह एक सूत्र है जो प्रत्येक परमाणु को अपने सूत्र में पिरो रहा है। ब्रह्माण्ड की कल्पना करने वाले आचार्यों ने यह कहा है कि एक ही सूत्र है जिसमें यह ब्रह्माण्ड पिरोया हुआ रहता है। तो महर्षि काग्भुषुण्ड जी के विद्यालय में इस प्रकार के प्रश्न होते रहते थे। ब्रह्मचारीजन एक स्थली पर विद्यमान होते, तो कई तारा-मण्डलों की

गणना हो रही हैं, कहीं सूर्यों की गणना हो रही है, कहीं आकाश-गङ्गा की गणना हो रही है, कहीं नाना निहारिका को निहार रहे हैं अपने अन्तःकरण में। इसी आभा में प्राण-सूत्र की चर्चा होती रहती थी, कि वह सर्वत्र ब्रह्माण्ड जो गति कर रहा है अपने आसन पर, प्रत्येक प्राणी, प्रत्येक लोक-लोकान्तर जो क्रियाशील हो रहा है, वह उसी प्राण-सूत्र की महिमा है; प्राण-सूत्र की एक आभा कहलाती है। पूर्व से दक्षिणायन को गति कर रहा है वह सर्वत्र एक प्राण की आभा में गति हो रही है।

देखो, काग्भुषुण्ड जी और महर्षि लोमश मुनि महाराज का दोनों के सम्वाद की मैंने अभी-अभी तुम्हें चर्चाएँ की थीं। महर्षि लोमश मुनि महाराज और काग्भुषुण्ड जी दोनों उत्तर-प्रश्न करते रहते थे। वह यह कहा करते थे कि संसार एक-दूसरे में रमण कर रहा है, एक-दूसरे में पिरोया हुआ ही दृष्टिपात आता है। जब दोनों की यह वार्ता प्रारम्भ रहती, तो दोनों अपने को प्राण-सूत्र में पिरोया हुआ स्वीकार करते थे। स्वीकार करते समय अपने स्थलियों पर विद्यमान हो करके, उन्होंने यह विचारा कि आज हम सूर्य-मण्डल की यात्रा करने के लिए तत्पर होना चाहते हैं। तो वहाँ उन किरणों में जब प्राण-सूत्र उन्होंने दृष्टिपात किया, प्राण-सूत्र ही है जिसके द्वारा सूर्य की किरण इस पृथ्वी-मण्डल पर आती हैं, नाना लोक-लोकान्तरों में प्रवेश करती हैं। द्यौ से जब वह सूर्य प्रकाश लेता है, विद्युत लेता है उसी विद्युत को ले करके संसार प्रकाशमान होता है। सूर्य प्रकाशित बना हुआ है। परन्तु देखो योगीजन उस प्राण-सूत्र के सहयोग से सूर्य की किरण के साथ-साथ वह सूर्य की यात्रा में तत्पर रहते थे।

प्राण चिकित्सा का निर्माण

मैंने बहुत पुरातनकाल में तुम्हें निर्णय देते हुए कहा था कि हमारे यहाँ नाना प्रकार के वैज्ञानिक हुए हैं। जिन वैज्ञानिकों ने सूर्य से ऊर्जा

ले करके, सूर्य से शक्ति को ले करके, सूर्य की यात्रा वाले यानों का निर्माण किया है और उन यानों में विद्यमान हो करके देखो यात्री बना रहा है। तो इसलिए आचार्यों ने कहा है कि इसी आभा को ले करके प्राण-सूत्र की चिकित्सा हमारे यहाँ परम्परागतों से विचित्र मानी गई है। महर्षि काग्भुषुण्ड जी ने लोमश मुनि से कहा जैसे प्राण-सूत्र को ले करके सूर्य की आभा में रमण करता है, सूर्य की किरणों के साथ-साथ ऊर्जा ले करके उसको प्राप्त कर लेता है, इसी प्रकार मानव के द्वारा एक प्राण चिकित्सा भी कहलाई जाती है। हमारे यहाँ प्राण चिकित्सा को ले करके सूर्य और चन्द्र दोनों के ज्ञान-विज्ञान को ले करके उन्होंने प्राण-चिकित्सा का निर्माण किया। काग्भुषुण्ड जी की विशेषता इस संसार में उस काल में यह रही है कि उन्होंने प्राण-सूत्र ले करके प्राण चिकित्सा का निर्माण किया है। हमारे यहाँ कई प्रकार की चिकित्सा का निदान होता रहा है। एक प्राण चिकित्सा है, एक वायु चिकित्सा है, एक द्यौ चिकित्सा कहलाती है, एक वनस्पति विज्ञान वाली चिकित्सा कहलाती है। परन्तु यह जो प्राण चिकित्सा है यह सर्वोपरि और सबसे महान् चिकित्सा मानी जाती है। जब हमारे यहाँ वैद्यराज प्राण-सूत्र में रमण करने वाले प्राण की चिकित्सा में तत्पर हुए तो उन्होंने अपने को प्राण-सूत्र में पिरोना प्रारम्भ किया। काग्भुषुण्ड जी ने बारह (12) वर्ष तक इस प्रकार का तप किया। मुनिवरो! जो वह प्राण के ऊपर अनुसन्धान करते रहे कि यह प्राण कितनी गति, कितनी घड़ी में नाभि केन्द्र से सूर्य प्राणायाम की गतियों में गति कर रहा है, कितनी घड़ियों में यह चन्द्र स्वर विज्ञान में गति कर रहा है। यदि दोनों में देखो उनका दोनों स्वरों प्रतिभा एक ही सूत्र में पिरोई हुई है तो वह स्वस्थ प्राणी कहलाया जाता है और इसमें दोनों प्रकार के विज्ञान में किसी स्वरों में किसी प्रकार की त्रुटियाँ और अस्वार्थ मन्द और तेजोमयी गति अस्वान रहती है तो दोनों में किसी प्रकार के रुग्ण की आशङ्का बनी रहेगी। तो परिणाम यह कि प्रत्येक मानव को प्राण चिकित्सा के ऊपर अध्ययन

करना चाहिए। प्राण-चिकित्सा वाले बहुत से वैज्ञानिक हुए हैं। प्राण-चिकित्सा वालों ने सूर्य की किरणों के द्वारा अपने को महा अस्वतों में प्रवृत्त किया है।

महर्षि लोमश काग्भुषुण्ड जी का अध्ययन एवम् चिन्तन

आज मैं बेटा! चिकित्सा के सम्बन्ध में कोई चर्चा प्रकट नहीं करना चाहता हूँ। मेरे प्यारे महानन्द जी नाना प्रकार की मुझे प्रेरणा देते रहते हैं। आज मैं इस प्रेरणा के ऊपर अपना कोई विचार देना नहीं चाहता हूँ। विचार-विनिमय यह है कि महर्षि काग्भुषुण्ड जी महर्षि लोमश मुनि महाराज की यह चर्चा हो रही थी कि हमें अपने को कैसे महान् बनाना है और बाह्य जगत् व आन्तरिक जगत् में जो यज्ञ हो रहा है इस याग का संसार में क्या प्रतिफल होता है। मैंने बहुत पुरातन काल में तुम्हें निर्णय देते हुए कहा था कि **हमारे यहाँ प्राण को जान करके ही वैज्ञानिकजन लोक-लोकान्तरों के सूत्र को जानते हैं।** मुझे एक समय स्मरण है काग्भुषुण्ड जी और लोमश मुनि महाराज अपनी स्थली पर विद्यमान हो करके यह अध्ययन कर रहे थे। उन्होंने सूर्य किरणों से सूक्ष्म-सा एक यन्त्र का निर्माण किया। सभा में उनके विद्यालय में राजा सम्पाती और महाराजा गरुड़ यह दोनों विद्यमान उनके शिष्य कहलाते थे और दोनों ने सूर्य विज्ञान के ऊपर बहुत अध्ययन किया, प्राण-सूत्र के ऊपर अध्ययन किया। जब वह अध्ययन करने लगे तो ऐसा मुझे स्मरण है कि उन्होंने एक यन्त्र का निर्माण किया और यन्त्र में यह दृष्टिपात करते थे कि जो शब्द विज्ञान है, जो पृथ्वी की परिक्रमा कर रहा है, जो लोक-लोकान्तरों की परिक्रमा करने वाला है, जो शब्द द्यौ-लोक में रमण करने वाला है, उस शब्द की प्रतिभा में मानव अपने में परणित करता रहा है। तो विचार-विनिमय क्या? यन्त्रों में वह सूर्य विज्ञान में सूर्य की किरणों को एकत्रित करने में लगे रहें और मुनिवरो! देखो वही सूर्य की किरण जो पृथ्वी के गर्भ में परणित हो

करके परमाणुओं का आदान-प्रदान कर रहे थे। उन परमाणुओं को साकार रूप बनाने में सदैव सहयोगी सिद्ध हुए तो मुझे कुछ ऐसा स्मरण है कि उनका, दोनों का, काग्भुषुण्ड जी और लोमश मुनि महाराज जहाँ आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता जहाँ आत्मा के ऊपर विवेचना करते रहते थे, वहाँ वह कई विज्ञान में, भौतिक विज्ञान में भी रत्त रहते थे।

एक समय अपने यन्त्रों में विद्यमान हो करके एक आकाश-गङ्गा में जाने लगे; एक आकाश-गङ्गा में चन्द्र लोकों की गणना करने लगे। चन्द्रमाओं की गणना करते-करते ऐसा मुझे स्मरण है कि उन्होंने एक ही आकाश-गङ्गा में अरबों-खरबों चन्द्रमाओं को दृष्टिपात किया। चन्द्र-मण्डलों का दृष्टिपात करते हुए वह शान्त हो गए और अन्त में यह कहा कि यह तो विशाल विज्ञान है। विशाल विज्ञान में हम जाना नहीं चाहते हैं। परमात्मा का विज्ञान इतना नितान्त है कि इसके ऊपर मानव अनुसन्धान करने लगता है पर अन्त में मौन हो जाता है। अन्त में वह मौन हो करके यह कहता है मैं तो बाल्य बन गया हूँ, मैं तो प्रभु का पुत्र बन गया हूँ। मैं इसके विज्ञान को जान नहीं पाता जैसे माता की लोरियों का पान करता हुआ बालक मौन रहता है 'क्षुधो सम्भवा देवो ब्रह्मा' वह अपने में मौन रह करके शिशु प्रवृत्ति में परणित हो जाता है। तो देखो यह विशाल जगत् है प्रभु का। इसके ऊपर प्रत्येक मानव परम्परागतों से अनुसन्धान करता रहा है। प्राण-सूत्र में अपने को पिरोता रहा है। प्राण-सूत्र में लोक-लोकान्तर जो एक सूत्र में पिरोए हुए हैं, उनको निहारता रहा है, क्रिया रूप बनाता रहा है। परन्तु देखो अन्त में वह मौन हो गया है।

आज का वेद मन्त्र कह रहा था 'मातम् ब्रह्म वाचाः देवम् वृथा' महर्षि लोमश व काग्भुषुण्ड जी वेद मन्त्र के ऊपर बहुत चिन्तन करते थे और वह चिन्तन क्या है? **माता एक प्रकार का रथ है,** माता एक प्रकार का रथ कहलाता है। 'रथस्चम् ब्रह्मवाचाः' वह रथ कैसे है उस

रथ में सब देवता विद्यमान रहते हैं। सब देवता उसमें विद्यमान हो करके उस रथ में विद्यमान होने वाला एक आत्मा है, एक अणु है, वह एक परमाणु है। उस **अणु और परमाणु में सर्वत्र देवता विद्यमान रहते हैं।** वह अणु भी परमाणु भी एक प्रकार का रथ बना हुआ है। कैसे रथ बना हुआ है? शिशु एक बिन्दु है और उस बिन्दु में उस परमाणु का जब विभाजन करते हैं तो उसमें सर्वत्र देवता विद्यमान रहते हैं। कौन देवता है? उसमें गति भी विद्यमान है, प्राण भी विद्यमान है, तेज भी विद्यमान है, गुरुत्व भी विद्यमान है। सर्वत्र ब्रह्माण्ड उसमें दृष्टिपात आता है। **एक परमाणु में सर्वत्र ब्रह्माण्ड दृष्टिपात आता है।** जैसा यह बाह्य हमें ब्रह्माण्ड दृष्टिपात आ रहा है तो इस ब्रह्माण्ड की कल्पना करते हुए उन्होंने कहा कि एक प्रकार का रथ है। वह माता कौन है जो रथ ही है, **जो रथ बनी हुई है वह चेतना है,** वह मेरा प्यारा प्रभु है। उस रथ में सर्वत्र प्राणी विद्यमान हैं लोक-लोकान्तर उसमें विद्यमान हैं। जैसे एक मधुमक्खी होती है परन्तु वह आवृत्तियों में रमण करने वाली प्रत्येक मक्खियाँ उसकी परिक्रमा करती रहती हैं। इसी प्रकार कुछ परमाणु गति करते हैं जो रथ के रूप में विद्यमान हैं। यही विज्ञान जब महर्षि भारद्वाज मुनि के यहाँ प्रकट हुआ था, ब्रह्मचारी सुकेता ने यही कहा था कि महाराज यह जो एक वस्तु का बिन्दु है इस एक रथ के बिन्दु में परमाणु है विशेष और उस परमाणु के अन्तर्गत नाना प्रकार के परमाणु गति कर रहे हैं और जो परमाणु गति कर रहे हैं वह एक प्रकार का बिन्दु रथ बना हुआ है। **उस बिन्दु रथ में ही मानव का चित्त विद्यमान रहता है।** तो मेरे प्यारे यह विशाल ज्ञान है प्रभु का। यही काग्भुषुण्ड जी और लोमश मुनि की अपने विद्यालयों में इस प्रकार की चर्चाएँ होती रहती थीं, इस प्रकार का अनुसन्धान होता रहता था। इन अनुसन्धान की प्रवृत्तियों में मानव परम्परागतों से रत्त होता रहा है।

मैं तुम्हें कोई विशेष विवेचना देने नहीं आया हूँ। विवेचना केवल यह देने के लिए आया हूँ कि यह जो प्रभु का जगत् है यह जो प्रभु

का ब्रह्माण्ड है, यह इतना अनन्तवत् माना गया है कि मानव चिन्तन करता हुआ अन्त में मौन हो जाता है। अन्त में शिशु की भाँति बाल्य प्रवृत्ति में प्रवेश कर जाता है। इतना विशाल विज्ञान है मेरे प्यारे प्रभु का। महर्षि लोमश और कागभुषुण्ड जी अपने स्थलियों पर विद्यमान होकर के प्राण के ऊपर चर्चा करने लगे। उन्होंने कहा कि **यह जो सूर्य प्राण है इसका सम्बन्ध सूर्य से होता है। चन्द्र का जो चन्द्र प्राणायाम है उसका सम्बन्ध चन्द्रमा से होता है।** चन्द्रमा में अमृत है, शीतलता है और देखो सूर्य में तेज है, सूर्य में प्रकाश है, तेज है, तेजोमयी कहलाता है। परमाणुओं के आदान-प्रदान की इसमें शक्ति है। यही शक्ति चन्द्रमा में मानी गई है। परन्तु देखो इन दोनों प्राण को हम अपने में जब ग्रहण कर लेते हैं अपने अन्तर्जगत में ले जाते हैं और बाह्य जगत् से परमाणुओं को लाते हैं अन्तर्जगत से अशुद्ध परमाणुओं को त्यागते हैं तो इससे हमें यह सिद्ध हुआ है कि प्राण हमारा शोधन करने वाला है, प्राण ही गति का देने वाला है। प्राण-सूत्र में दोनों एक समय प्राण को ले करके पृथ्वी के गर्भ में प्रवेश कर गए। पृथ्वी के गर्भ में जो जल-अग्नि का भण्डार 'अप्रतम् ब्रह्मवाचाः' प्राण दोनों रूपों में परमाणुओं को लिए हुए गति कर रहा था। कहीं वही प्राण अग्नि का भण्डार बन करके, वही प्राण कहीं जल का, शिशु का भण्डार बन करके दोनों का आदान-प्रदान कर रहा है। उन्हीं परमाणुओं से सूर्य और चन्द्र दोनों प्रकार के परमाणुओं से स्वर्ण का निर्माण हो रहा है, रत्नों का निर्माण हो रहा है। जल को शक्तिशाली बनाया जा रहा है पृथ्वी के गर्भ में, वसुन्धरा के गर्भ में अग्नि का भण्डार है। वहाँ अमृत का भण्डार है जिसके ऊपर मुनिवरो! देखो वैज्ञानिकजनों ने जब पृथ्वी के गर्भ में प्रवेश किया, तो वहाँ नाना प्रकर के रत्नों का, परमाणुओं का निर्माण हो करके धातु पिपात का निर्माण हो रहा था। तो उन्हीं परमाणुओं का सम्बन्ध माता के गर्भस्थल में एक बिन्दु प्रवेश हुआ, उन्हीं धातुओं का सम्बन्ध चन्द्र प्राण के ऊपर सूर्य स्वरों के ऊपर, वही प्राण बन करके

नाना धातु पिपात बन करके इस मानव के शरीर का निर्माण होता रहा है।

बेटा! मैं दूरी चला गया हूँ वाक् उच्चारण करते-करते। विचार-विनिमय यह चल रहा था कि प्रभु का विज्ञान है यह इतना नितान्त है कि मानव इसके ऊपर परम्परागतों से अनुसन्धान करता रहा है, अन्वेषण करता रहा है। तो महर्षि लोमश और काग्भुषुण्ड जी की मैं चर्चा कर रहा था। उनके जीवन की कुछ चर्या के ऊपर कुछ विचार देने के लिए हम तत्पर थे। तो विचार यह दे रहे थे कि दोनों का अध्ययन इस प्राण के ऊपर गम्भीर होता रहा है। इन्हीं प्राणों को ले करके सूर्य-चन्द्र को ले करके, चन्द्रमा अमृत को बहाने वाला है और सूर्य तेज को बहाने वाला है, प्रकाश को देने वाला है। जैसे सूर्य के प्रकाश से उदय होने पर नेत्र प्रकाशित हो जाते हैं, चन्द्रमा के उदय होने पर रात्रि उसके गर्भ में प्रवेश कर जाती है, अन्धकार चन्द्रमा के गर्भ में प्रवेश हो करके अपनी-अपनी कान्ति के द्वारा अमृत की वृष्टि करते रहते हैं, पृथ्वी के गर्भ में शीतलता आती है, कृषि उपजने लगती है, वनस्पति विज्ञान में अमृत का भरण हो जाता है। सूर्य प्रातःकाल उदय होते ही उस अमृत को उसमें समावेश कर देता है। समावेश करके कृषि और जितनी वनस्पति विज्ञान है वह अपने में सक्रिय बन करके स्थिर बन करके अपने कार्यों में रत्त हो जाती है। अपने गुणों को एक-दूसरे के सहायक बन करके यह जगत् ऐसी आभा में दृष्टिपात आता है जैसे इसमें प्रभु की सर्वत्र महती विद्यमान हो रही है। सर्वत्र प्रभु की महती दृष्टिपात आ रही है।

हे माँ! तू कैसी रथ बनी हुई है? इस सर्वत्र ब्रह्माण्ड को अपने में धारण कर रही है यह ब्रह्माण्ड तेरी आनन्दमयी नौका में विद्यमान हो करके गति कर रहा है। अपने को पार करना चाहता है, तेरे ही आँगन में विद्यमान हो करके जैसे रक्त के बिन्दु में भिन्न-भिन्न प्रकार

के परमाणु एक ही रथ में विद्यमान हैं, एक बिन्दु रूपी नौका में विद्यमान हैं। इसी प्रकार एक रेनकेतु परमाणु होता है, उस परमाणु में जब इस शरीर को त्याग करके आत्मा जाता है तो एक **रेनकेतु और स्वाति परमाणु** होते हैं, जो उसके अन्तर्गत नाना प्रकार के परमाणु मानव का चित्र बन करके द्यौ-लोक में रत्त हो जाते हैं। यह कैसा मेरे प्यारे प्रभु का विज्ञान है? कैसी मेरी प्यारी माता, वह वसुन्धरा जो हमें अपने में धारण कर रही है, लोक-लोकान्तरों को अपने में धारण कर रही है। हम उस प्रभु का, उस ममतामयी के गर्भ में जाने के लिए सदैव उत्सुक बने रहते हैं और यह चाहते हैं कि हम उस प्रभु की ममतामयी आनन्दमयी लोरियों का पान करते हुए इस सागर से पार हो जाएँ। प्रत्येक मानव परम्परागतों से यही चाहता है, आनन्द को प्राप्त करना चाहता है। कोई द्रव्य आनन्दव हे वाचदेवाः जितनी मानवीय साधना है, मानवीय द्रव्य है, उसी में मुनिवरो! देखो सर्वत्र साधना निहित रहती है।

मैं कोई विशेष चर्चा तुम्हें प्रकट करने नहीं आया हूँ, मैं कोई व्याख्याता नहीं हूँ, परन्तु तुम्हें एक सूक्ष्म-सा परिचय देने चला आता हूँ और वह परिचय क्या है कि प्रत्येक परमात्मा की यज्ञशाला में विद्यमान है। यह जो जितना जगत् है, ब्रह्माण्ड है यह परमपिता परमात्मा की एक अनुपम यज्ञशाला है। इसमें प्रत्येक मानव बाह्य जगत् अन्तर्जगत् दोनों का स्वरूपों में याज्ञिक बना हुआ है। **अग्न्याधान करता हुआ, अग्नि के समीप कहता है** 'ब्रह्मा अग्नि देवो ब्रह्मा वाचम् अग्निः' हे अग्नि! तू ब्रह्मा है, हे अग्नि! तू प्रकाश को देने वाली है, हे अग्नि! तू ज्ञान रूप बन करके रहती है, हे अग्नि! कहीं तू काष्ठों में रहने वाली अग्नि है। तेजोमयी बन करके तेरा ऊर्ध्वा मुख रहता है, क्योंकि तेरा सखा ही ऊर्ध्वा में है। तो इसलिए अग्नि तेरा ऊर्ध्वा मुख कहलाता है। हे अग्नि! तेरी जिह्वाओं में देखो यजमान् अपनी यज्ञशाला में विद्यमान हो करके तेरे मुख में कुछ अर्पित करना चाहता है। तेरे मुखारबिन्दु में

अर्पित करना चाहता है। क्योंकि तेरा मुख ही तो है जो इस संसार को तेजोमयी बना रहा है। यजमान कुछ साकल्य देना चाहता है, कुछ अभी तेरे में प्रदान करना चाहता है। हे अग्नि! तू ही तो इस पृथ्वी के गर्भ में विद्यमान हो करके स्वर्ण इत्यादियों का निर्माण करती है। हे अग्नि! जब तू ऊर्ध्वा में अन्तरिक्ष में ओत-प्रोत होती है, वही तो अग्नि है जो परमाणुओं का आदान-प्रदान करते द्यौ-मण्डल का निर्माण कर रही। कहीं द्यौ-मण्डल का निर्माण, कहीं मानव कृतियों में दिशाओं का निर्माण हो रहा है, कहीं मुनिवरो! देखो अन्तरिक्ष में तू मानव के, प्रत्येक प्राणी के चित्रों को ले करके उसमें गति करा रहा है। वह प्रत्येक चित्र शब्दों के साथ में अन्तरिक्ष में विद्यमान रहते हैं। हे नमम् ब्रह्मा अग्नि हे अग्नि! जब तुझे कोई जानना चाहता है तू उन चित्रों का दिग्दर्शन करा देती है, जो चित्र देखो प्रत्येक मानव के अन्तरिक्ष में विद्यमान रहते हैं।

देखो, विचार यह चल रहा है कि आज हम अग्नि का आधान करना चाहते हैं। अपने में अग्नि को धारण करना चाहते हैं। वह जो ज्ञान रूपी अग्नि है, वही तो मानव का कल्याण करने वाली है क्योंकि ज्ञान ही संसार में मानवीय तत्त्वों पर निहित रहता है। वही अग्नि है जो ब्रह्मा अग्नि बन करके देखो द्यौ-लोक में प्रवेश करती है अन्तरिक्ष में रत्त रहने वाली है। मानव जैसे शब्दों का उच्चारण करता है, शब्द के साथ में चित्र, चित्रों के साथ में उसका क्रियाकलाप अन्तरिक्ष में विद्यमान रहता है। विचार यह देने जा रहा था कि इस अग्नि का आधान करते हुए काग्भुषुण्ड जी और लोमश मुनि महाराज दोनों अपने विद्यालय में अध्ययन करते रहे। इसी अग्नि को ले करके महाराजा सम्पाती और दोनों विधाता गरुड़ जी उनके दोनों कृतियों में वह भी अनुसन्धान करते थे। समुद्र के तट पर उनका सूक्ष्म सा राज था, जो राजा रावण ने उनके राष्ट्र को विजय कर लिया था। काग्भुषुण्ड जी तो देखो महर्षि लोमश

के आश्रम में प्रवेश कर गए थे और सम्पाती समुद्र के तट पर काग्भुषुण्ड जी के पिता थे जो अकृत कहलाते थे, सम्भुक ऋषि महाराज वह उनके आश्रम में चले गए थे। उनकी प्रतिक्रिया उनका राष्ट्र समाप्त हो गया था। परन्तु वे वैज्ञानिक थे, अपने में अनुसन्धान करते रहते थे, विचार-विनिमय करते रहते थे।

आज तुम्हें बेटा! मैं साहित्यिक चर्चा प्रकट करने नहीं आया हूँ। विचार यह देने के लिए आया हूँ कि प्रत्येक मानव को प्राण-सूत्र को जानना है। प्रत्येक प्राणी परमपिता परमात्मा के राष्ट्र में मानो शिशु के रूप में रहता है, चाहे कोई धिराज हो, राजा हो, वैज्ञानिक हो, योगी हो, प्राण-सूत्र में रमण करने वाला हो। परन्तु देखो वह माता की लोरियों का जब पान करने लगता है, **लोरियों का पान करने वाला शिशु कहलाता है और उसकी लोरी क्या हैं? मेरे पुत्रो! ज्ञान है।** जब उसके अन्तिम छोर पर जाता है, तो वैज्ञानिक हो चाहे किसी भी प्रकार का वैज्ञानिक आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता हो, चाहे भौतिक विज्ञानवेत्ता हो वह मौन हो जाता है और जहाँ मौन हुआ वहीं शिशु बन जाता है। जैसे बालक माता की लोरियों का पान करके शिशु बना हुआ है वह मौन रहता है, लोरियों के आनन्द को प्रकट नहीं कर सकता इसी प्रकार बेटा! प्रभु के गर्भ में प्रभु के ज्ञान और विज्ञान को जानता हुआ उसका वर्णन साकार रूप में नहीं कर सकता। इसी प्रकार शिशु बना हुआ है। मैंने शिशु की चर्चाएँ की हैं काग्भुषुण्ड जी ने भी अन्तिम में यही कहा है। योगाभ्यास करते हुए आध्यात्मिकवाद में प्रवेश करते हुए, भौतिक विज्ञान में प्रवेश करते हुए, परमाणुवाद को जानते हुए, उन्होंने यही कहा, मैं शिशु बना हुआ हूँ, मैं बाल्य हूँ, प्रभु के राष्ट्र में कोई बलवती नहीं, कोई मानव विशाल नहीं है। प्रभु के ज्ञान और विज्ञान में प्रत्येक प्राणी शिशु के रूप में ही रत्त रहता है, क्योंकि प्रभु का ज्ञान और विज्ञान इतना नितान्त है, इतना महान् है कि अन्त में प्राणी मौन हो जाता है और वह अपने में कोई वाक् वर्णन नहीं कर सकता।

यह है बेटा! आज का वाक्। **आज के वाक् उच्चारण करने का अभिप्राय हमारा क्या** कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए देव की महिमा का गुणगान गाते हुए इस संसार सागर से पार होने का प्रयास करें। अब हमारा वाक्य समाप्त होने जा रहा है; शेष चर्चाएँ, यदि समय मिलेगा तो कल करेंगे। अब वेद मन्त्रों का पठन-पाठन होगा।

पूज्य महानन्द जी– अच्छा भगवन् आज्ञा!

पूज्यपाद गुरुदेव–ओ३म् शान्तिः शान्तिः शान्तिः

दिनाँक : 11 नवम्बर, 1983
समय : सायँ 7 बजे
स्थान : सेठ ओंकारनाथ, जवाहरलाल मोदीनगर, मेरठ

सूचना

सभी आजीवन/वार्षिक सदस्यों को 'यौगिक प्रवचन' पत्रिका प्रत्येक मास की 10/11 तारीख को प्रेषित की जाती है। किसी भी सदस्य को पत्रिका प्राप्त न होने की स्थिति में अपने पोस्ट मैन से एक सप्ताह के समय में जानकारी करें और फिर भी न मिलने की स्थिति में अपने सम्बन्धित पोस्ट ऑफिस में इस विषय में लिखित एक प्रार्थना-पत्र पोस्ट मास्टर साहब को दें जिससे कि पत्रिका न मिलने की खोज-बीन डाक विभाग द्वारा कराके आपकी पत्रिका आपको समय पर मिलनी प्रारम्भ हो जाए। कृपया प्रार्थना-पत्र की एक प्रति पर डाक विभाग द्वारा प्राप्ति के हस्ताक्षर व मोहर लगवाकर हमें भी भेज देवें जिससे कि इस विषय में यहाँ भी डाक विभाग को अवगत करा दिया जाए।

वैदिक अनुसन्धान समिति (पञ्जी.)

।। ओ३म् ।।

सौभाग्यशाली माता

मुझे महर्षि गौतम का और अगस्त मुनि का जीवन स्मरण आता रहता है। अगस्त मुनि की माता का नाम श्वेशनैः देवस्या था, उनका नाम शनैः दिव्या वर्णोति कहलाता था। एक समय बाल्यकाल में जब वह बालक पाँच वर्ष का था, पाँच वर्ष के पुत्र ने माता से यह कहा– हे माता! तुमने मुझे संस्कारों से जन्म दिया है, परन्तु मैं यह चाहता हूँ कि मुझे तू 12 वर्ष का भोज्य प्रदान कर जिससे मेरा अन्तरात्मा उस अन्न से पवित्र हो जाए। माता ने, शनैः ने यह वाक् स्वीकार कर लिया। स्वीकार करके माता भोजनालय एकान्त हृदय और मन की सन्तुलना को करती हुई, वह भोजन करा, भोजन को तपाती थी अग्नि में। तपाने के पश्चात् बाल्य को भोजन कराती थी। 12 वर्ष के पश्चात् मेरे प्यारे महर्षि अगस्त मुनि महाराज आत्मा और परमात्मा की प्रतिभा को जान करके विज्ञान की धाराओं को अन्न में जितने विज्ञान की तरङ्गें होती हैं उनको सबको जान करके वह महान् बन गया, वह पवित्र बन गया। तो विचार क्या? माता जब भोजन बनाती है, भोजन तपाती है अग्नि में, तो योगेश्वर बना देती है। गायत्री का जपन हो रहा है, ध्वनियाँ वेदों का गान गा रही हैं, माता भोज्य बना रही है परन्तु वह तरङ्गों वाले भोजन को बाल्य पान करता है, तो बालक महान् बन जाता है, पवित्र बन जाता है। माता वही सौभाग्यशाली होती है जिस माता के गर्भ से बालक ब्रह्मवेत्ता या ब्रह्मविचारक बन जाए जिससे वह परमपिता परमात्मा के क्षेत्र में महानता को प्राप्त हो जाए।

पूज्यपाद-गुरुदेव

॥ ओ३म् ॥

ऋषियों के उद्‌गार

1. मन और प्राण को एकाग्र करके, योग के द्वारा इस प्रकृति का विज्ञान स्वतः ही मानव के समीप आ जाता है।
2. संसार में जितना भी मानवीय विज्ञान है वह मानव के हृदय में है।
3. मन और प्राण के द्वारा इन्द्रियों के विषय का निरोध करता हुआ जब मन और प्राण का, दोनों का समन्वय हो जाता है तो उस समय मानव योग सिद्ध हो जाता है। वह योगी कहलाता है।
4. योगी की प्रखर बुद्धि हो जाती है, प्रखर विचार हो जाते हैं। महत्ता में वह रमण करने लगता है।
5. प्रातःकाल की अमृत बेला में उस अपने प्यारे प्रभु का गुणगान गाते हुए वेद की प्रतिभा को जानते हुए हम अपने ऊपर अनुशासन करने का प्रयास करें क्योंकि जब तक हमारे जीवन में अपने ऊपर अनुशासन नहीं होगा तो योग में कदापि भी ऊँचा नहीं बन सकेंगे।
6. आत्मा क्या है? इस मानव शरीर में चेतना है। उस चेतना को जानने का नाम योग कहलाता है।
7. ज्ञान का माध्यम मनिराम को कहा जाता है।
8. अति कार्य का नाम तृष्णा कहलाता है।
9. कोई भी तृष्णा न उत्पन्न होना यह मुनिवरो अध्ययन का कार्य है।
10. इन्दियाँ क्या है? इन्दियों का विषय क्या है? इन्द्रियों के विषय में विचारने लगता है मानो यहाँ से साधना का प्रारम्भ होता है।
11. इस यौगिक क्षेत्र में तुम ऊँचा बनना चाहते हो तो प्रातःकाल की अमृतवेला में, मानो शान्त वातावरण में विराजमान होकर के उस शान्त वातावरण को विचारा जाए। यह शान्त वस्तु क्या है?
12. अध्ययन का नाम ही अनुशासन है।
13. तृष्णा को त्यागना प्रत्येक इन्द्री को आन्तरिक जगत में ले जाने का नाम अनुशासन है।

।। ओ३म् ।।

जन्मदिन एवम् नामकरण संस्कार

आयुष्मति अवन्ती

परमपिता परमात्मा की असीम कृपा से एवम् पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज के शुभाशिर्वाद से श्रीमति राजकुमारी त्यागी धर्मपत्नी श्री यतेन्द्र त्यागी निवासी ग्राम चिरथावल जिला मुजफ्फरनगर, उ.प्र. ने अपनी पौत्री आयुष्मति अवन्ती के प्रथम जन्मदिन की पावन वेला में नामकरण उद्घोष स्वस्ति याग की सम्पन्नता पर दिनाँक 15 दिसम्बर, 2017 को कराया जिसमें कन्या की माता श्रीमति ऋचा त्यागी एवम् पिता श्री आलोक त्यागी जी ने देव पूजा के माध्यम से सभी देवताओं को सुगन्धित साकल्य प्रदान करते हुए राजनगर एक्सटेंशन के वायुमण्डल को पवित्रता से ओत-प्रोत कर दिया। वैदिक परम्परा की सम्पन्नता का निर्वाह परिवार पूर्वजों की शिक्षा के रूप में निरन्तर चला आ रहा है और उसको और अधिक पवित्रता से सम्पन्न करने का सौभाग्य माता श्रीमति ऋचा त्यागी को अपने बाबा श्री कालूराम त्यागी जी व माता-पिता श्रीमति रश्मि त्यागी एवम् गुरुवचन शास्त्री जी की छत्रछाया में धरोहर के रूप में बाल्यकाल से प्राप्त होता रहा है। विदुषी माताएँ ही श्रेष्ठ सन्तान को राष्ट्र को अर्पित करने में पुरातनकाल से अग्रगणीय रही है।

इस पवित्र वेला के शुभागमन पर वैदिकता से सम्पन्न परिवार ने 1100 रु. का सात्विक सहयोग समिति के प्रकाशन कार्य को बल प्रदान करने के लिए अर्पित किया है। जिसके लिए समिति हृदय से आभार प्रकट करती है और सौभाग्यशाली शिशु को जन्मदिव व नामोकरण की शुभकामनाएँ देते हुए समस्त परिवार की सुख, शान्ति, दीर्घायु एवम् सर्वतोन्मुखी समृद्धि के लिए ईश्वर से कामना करती है।

वैदिक अनुसन्धान समिति (पञ्जी.)

योगनिष्ठ पूज्यपाद ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज (शृङ्गी ऋषि जी) की अमृतवाणी संहिता के रूप में

*1.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 1)	80.00
*2.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 2)	80.00
3.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 3)	60.00
*4.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 4)	100.00
5.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 5)	60.00
6.	Yogic Wisdom of Ancient Rishis	80.00
7.	वेद पारायण-यज्ञ का विधि विधान	25.00
8.	आत्म-लोक	35.00
9.	धर्म का मर्म	40.00
10.	शंका-निवारण	35.00
11.	यज्ञ-प्रसाद अर्थात् यज्ञ का महत्व	40.00
12.	आत्मा व योग-साधना	35.00
*13.	देवपूजा	50.00
14.	अतीत का दिग्दर्शन (भाग 1)	125.00
15.	अतीत का दिग्दर्शन (भाग 2)	125.00
16.	अतीत का दिग्दर्शन (भाग 3)	125.00
17.	रामायण के रहस्य	35.00
18.	यज्ञ एवं औषधि विज्ञान	45.00
19.	महाभारत के रहस्य	30.00
20.	अलङ्कार-व्याख्या	35.00
21.	रावण-इतिहास	50.00
22.	महाराजा-रघु का याग	30.00
23.	वनस्पति से दीर्घ-आयु	35.00
24.	मोक्ष प्राप्ति का मार्ग	35.00
25.	चित्त की व वृत्तियों का निरोध	35.00
26.	आत्मा, प्राण और योग	35.00
27.	पञ्च-महायज्ञ	35.00
28.	अश्वमेघ-याग और चन्द्रसूक्त	40.00
29.	याग-मन्जूषा	40.00
30.	आत्म-दर्शन	30.00
31.	पुत्रेष्टि-याग और मात-दर्शन	30.00
32.	याग और तपस्या	60.00
33.	यागमयी-साधना	35.00
34.	यागमयी-सृष्टि	35.00
35.	याग-चयन	40.00
36.	दिव्य-रामकथा	120.00
37.	ज्ञान-कर्म-उपासना	35.00
38.	दिव्य-ज्ञान	40.00
*39.	महाभारत एक दिव्य दृष्टि	90.00
40.	महर्षि-विश्वामित्र का धनुर्याग	40.00
41.	आत्म-उत्थान	40.00
42.	तप का महत्व	40.00
43.	अध्यात्मवाद	40.00
44.	ब्रह्मविज्ञान	40.00
45.	वैदिक-प्रभा	35.00
46.	प्रकाश की ओर	35.00
47.	कर्तव्य में राष्ट्र	40.00
48.	वैदिक-विज्ञान	35.00
49.	धर्म से जीवन	35.00
50.	आत्मा का भोजन	40.00
51.	साधना	35.00
52.	त्रेताकालीन-विज्ञान	40.00
53.	यज्ञोमयी-विष्णु	40.00
54.	यौगिक प्रवचन माला भाग-6	80.00
55.	स्वर्ग का मार्ग	50.00
*56.	यौगिक प्रवचन माला भाग-7	80.00
57.	माता मदालसा	60.00
58.	यौगिक प्रवचन माला भाग-8	80.00
59.	यौगिक प्रवचन माला भाग-9	80.00
60.	यौगिक प्रवचन माला भाग-10	80.00
61.	याग एक सर्वाङ्ग पूजा	80.00
62.	यौगिक प्रवचन माला भाग-11	80.00
*63.	यौगिक प्रवचन माला भाग-12	80.00
64.	मानव कल्याण की चर्चाएँ	50.00
65.	प्रभु-दर्शन	50.00
*66.	यौगिक प्रवचन माला भाग-13	80.00
*67.	समाज उत्थान का मार्ग	50.00
*68.	यौगिक प्रवचन माला भाग-14	80.00
*69.	ब्रह्म की ओर	50.00
*70.	ईश्वर मिलन	50.00
*71.	यौगिक प्रवचन माला भाग-15	80.00
*72.	यौगिक प्रवचन माला भाग-16	80.00
*73.	नैतिक शिक्षा	50.00
*74.	यौगिक प्रवचन माला भाग-17	100.00
*75.	आत्मिक ज्ञान	60.00

*सहजिल्द का मूल्य 20 रु. अतिरिक्त है।

पुस्तक प्राप्ति के स्थान

योगनिष्ठ पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज की अमृतवाणी का साहित्य सँहिता, कैसेट्स, सी. डी. व डी. वी. डी. के रूप में निम्न स्थानों पर उपलब्ध हैः–

1. श्री महानन्द संस्कृत महाविद्यालय, लाक्षागृह, बरनावा, जिला–बागपत, (उ.प्र.)। मोबाइल नं 09719622950
2. श्री गुरुवचन शास्त्री, मकान नं. 165/30ए, दक्षिण भोपा रोड़, निकट माढ़ी की धर्मशाला, नई मण्डी, मुजफ्फरनगर (उ. प्र.)। मोबाइल नं. 09412888050
3. सुश्री. नीरू अबरोल, के-3 लाजपत नगर-3, नई दिल्ली। दूरभाष नं. 011-41721294
4. डॉ. मधुसूदनेश्वर प्रकाश, A-59 पंचशील एन्क्लेव नई दिल्ली-110017 दूरभाष नं. 011-41030481
5. श्री जितेन्द्र चौधरी, ए-84, मालवीय नगर, नई दिल्ली-110017, मो. नं. 9811707343
6. श्री अनिल त्यागी सी-47 रामप्रस्थ, गाजियाबाद (उ.प्र.)। दूरभाष नं. 0120-4165802
7. श्री आशीष त्यागी, सुपुत्र श्री सुशील त्यागी डी-293, रामप्रस्थ, पोस्ट ऑफिस चन्द्रनगर, गाजियाबाद पिन कोड-201011 (उ.प्र.)। दूरभाष नं. 0120-2642052
8. श्री लोमश त्यागी, 106/4 पंचशील कालोनी गढ़ रोड़, मेरठ, (उ.प्र.) मोबाइल नं. 09410452076
9. श्री विवेक त्यागी, 16ए, आलोक कॉलोनी, अल्कापुरी, हापुड़, (उ.प्र.)। दूरभाष नं. 0122-2316196
10. श्री संजीव त्यागी, 1107, सैक्टर-3, बल्लभगढ़, फरीदाबाद हरियाणा। मोबाइल नं. 09910589486
11. मैं. हर्ष मेडिकोज, ए-2/31, सैक्टर-110–मार्किट नोएडा, फेस-2, (उ.प्र.) मोबाइल नं. 9899228860, 9871367937
12. पवन त्यागी सुपुत्र श्री राजाराम त्यागी, मौ. खड़खड़ियान, माता, ग्राम खरखौदा, जिला मेरठ (उ.प्र.) मोबाइल नं. 7536097171
13. श्रीमती बाला, 251, दिल्ली गेट, नई दिल्ली। दूरभाष नं. 011-23282088
14. डॉ. अशोक कुमार आर्य, आर्यावर्त कालोनी निकट मुरादाबादी गेट, अमरोहा, जिला-जे. पी. नगर (उ.प्र.) मोबाइल नं. 09412139333
15. श्री सुमन कुमार शर्मा, जे-380, सैक्टर बीटा-2, ग्रेटर नोएडा, (उ.प्र.) मोबाइल नं. 09313530505
16. श्री सतीश भारद्वाज, ग्राम बहेडी, रोहाना मिल, जिला मुजफ्फरनगर (उ.प्र.)।
17. मैं. विजय कुमार, गोविन्द राम हासानन्द, 4408, नई सड़क, दिल्ली। दूरभाष नं. 011-23977216

मासिक सहयोग

श्री हरीराम गुप्ता, केसर स्टील, वजीरपुर, दिल्ली	1000 रुपये
श्री चिंतामणि त्यागी एवं श्री जगमोहन त्यागी बरला, मुजफ्फरनगर	1000 रुपये
श्री संजीव त्यागी (दिनकरपुर) फरीदाबाद, हरियाणा	1000 रुपये
श्री अरुण त्यागी, राजनगर, गाजियाबाद, उत्तर प्रदेश	500 रुपये
श्री विनोद त्यागी सुपुत्र श्री जयप्रकाश त्यागी मकनपुर, गाजियाबाद	500 रुपये
मा. कार्तिक त्यागी सुपौत्र श्री रामनिवास त्यागी ग्राम भंगेल, नोएडा	251 रुपये
मा. लोमश त्यागी सुपौत्र श्री रामनिवास त्यागी ग्राम भंगेल, नोएडा	251 रुपये
डॉ. शुचि, डॉ. राजीव चावला, आणद, गुजरात	250 रुपये
श्री राकेश शर्मा, विराट नगर, पानीपत, हरियाणा	250 रुपये
श्री कृष्ण लाल बत्रा, इन्द्री, जिला करनाल	201 रुपये
मास्टर कवन्धि, रामप्रस्थ, गाजियाबाद, उत्तर प्रदेश	101 रुपये
मास्टर सिद्धार्थ, अँकुर अपार्टमैन्ट, दिल्ली	101 रुपये
मास्टर अभ्युदय त्यागी, न्यू जर्सी, अमेरिका	101 रुपये

नम्र-निवेदन

पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज ने अपने प्रवचनों में वेद मन्त्रों का गुणगान करते हुए उनकी प्रचलित भाषा में व्याख्या की है। उसी अमृत वाणी को जनकल्याण के लिए ''सँहिता'' के रूप में प्रकाशित करने के लिए वैदिक अनुसन्धान समिति सभी श्रद्धालु एवम् दानदाताओं से सहयोग के लिए आह्वान करती है जिससे कि प्रकाशन का कार्य सुचारू रूप से ऊर्ध्वा गति को प्राप्त होता रहे। सहयोग की राशि समिति के बैंक खाते में स्वेच्छानुसार भेजने के लिए बैंक का विवरण निम्न प्रकार से है–

वैदिक अनुसन्धान समिति (पञ्जी.)
पंजाब नैशनल बैंक, खान मार्केट, नई दिल्ली
बैंक खाता नं. - 0149000100229389, IFSC Code – PUNB–0014900
website : www.shringirishi.in
Email : contact@shringirishi.in

योगमुद्रा में प्रवचन करते हुए पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज

उद्‌बोधन

आज पर्ययण समय में वेदों का गान गाते-गाते हमें ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे विधाता हमारे द्वारा कोई अमूल्य वस्तु प्रदान कर रहा हो। इसका क्या अभिप्राय है कि वेदों का गान गाते समय हृदय में आनन्द कहाँ से आ जाता है। वह कौन-सी अमूल्य निधि है जो हमें परमात्मा ने प्रदान की है? आज हम उस विधाता के बहुत बड़े ऋणी हैं जिस प्रकार मुनिवरो! प्रजा राजा की ऋणी होती है, क्यों होती है? कौन-सी प्रजा ऋणी होती है? मुनिवरो! जो प्रजा राजा के बनाए हुए नियमों के आधार से नहीं चलती, उसके आदर्शों का पालन नहीं करती। इसीलिए आज हम परमात्मा के ऋणी बने बैहे हैं। जो मानव परमात्मा के नियम का अच्छी प्रकार पालन नहीं करता, नाना प्रकार की अशुद्धि करता है, परमात्मा की नाना प्रकार की आलोचनाएँ करता है, वह मानव परमात्मा का महाऋणी है।

पूज्यपाद-गुरुदेव

(पुष्प-3 – प्रवचन–दिनांक 9 दिसम्बर 1962)

वर्ष 46 : अंक : 545
फरवरी 2018

मूल्यः
दस रुपये

RNI No. 23889/72
Delhi Postal R. No. DL (S)-01/3220/2018-2020
Licence to Post without prepayment
U (SE)-70/2018-2020
POSTED AT N.D.PS.O ON 10/11-02-2018
Published on 5th day of the same month